ज्ञानामृत

नवम्बर, 1980
वर्ष 16 ❋ अंक 6
मूल्य 1.75

पिछड़ा हुआ वह है जिसके कर्म पिछड़े हुए हैं। (स्पष्टीकरण के लिए पृष्ठ 1 देखिए)

ज्ञान दीप जलाकर नर से श्री नारायण और नारी से श्री लक्ष्मी बनने का पुरुषार्थ करना ही सच्ची दीपावली मनाना है।

मारिशस में स्थित डिवाईन लाईफ सोसाइटी के प्रमुख स्वामी वन्कलेशान्ता जी को ब्र० कु० चन्द्रा राखी बाँध रही हैं। साथ में ब्र० कु० सोमप्रभा खड़ी हैं।

पटना उच्च न्यायालय के न्यायधीश भ्राता सखर अली को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बांध रही हैं। साथ में ब्र० कु० निर्मल मणी खड़ी हैं

वहरवा (नेपाल) के सी० डी० ओ० भ्राता पदमाराज सुबेदी को ब्र० कु० गीता राखी बांध रही हैं।

बिहार के मुख्य मन्त्री डा० जगन्नाथ मिश्र को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बाँध रही हैं।

बिहार के राज्यपाल डा० ए० आर० किदवई को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बांधने के पश्चात् आत्म-स्मृति का तिलक लगा रही हैं।

जालन्धर से प्रकाशित होने वाले 'पंजाब केसरी' व हिन्द समाचार पत्रों के सम्पादक एवं भूतपूर्व संसद सदस्य लाला जगत नारायण को ब्र० कु० राज राखी बाँध रही हैं। विधान सभा के भूतपूर्व सदस्य भ्राता रमेश चन्द उनके साथ में बैठे हैं।

अमृत-सूची

१. पिछड़ा हुआ कौन है ? (मुख पृष्ठ से सम्बन्धित) १
२. कल्याणकारी आत्म बम और परमात्म बम (सम्पादकीय) २
३. नहीं पीता बीड़ी को, बीड़ी तुझको पीती है(गीत) ३
३. छोटी और बड़ी दीपावली ४
४. आबू-दर्शन ६
५. मेरे सपनों का भारत ६
६. विद्यार्थी जीवन और आध्यात्मिकता १०
७. बाबा की चाहना (कविता) ११
८. सम्पूर्णता की प्राप्ति के लिए निर्णय शक्ति १२
९. आध्यात्मिकता ही जीवन रूपी पुष्प की सुगन्ध है १५
१०. रक्षा बन्धन समाचार (चित्रों में) १७
११. मातेश्वरी की वाणी १९
१२. खूनी नाहक खेल २१
१३. ईश्वर हमें सिखाते २२
१४. सेवा समाचार (चित्रों में) २३
१४. अच्छा हुआ २५
१५. ज्ञानचक्षु २७
१६. संकल्प शक्ति २८
१७. जब से मिले तुम मुझको बाबा (गीत) ३१
१८. गीता-ज्ञान दाता (एकांकी) ३२
१९. नवरात्रि तथा विजय दशमी अथवा दशहरा का समाचार जिन समाचार पत्रों में छपा उनकी सूची ४०

मुख पृष्ठ के चित्र से सम्बन्धित

पिछड़ा हुआ कौन है ?

आज बहुत से लोग मनुष्य का मूल्य उसके आर्थिक स्तर को अथवा उसके धन्धे को देख कर करते हैं। यदि किसी मनुष्य का धन्धा साफ़-सुथरा हो और आराम से होने वाला हो तो वे उस व्यक्ति को विशेष मानते हैं और यदि किसी व्यक्ति की आय बहुत हो तो समाज उसे आदर की दृष्टि से देखता है। इसके विपरीत यदि कोई मनुष्य झाड़ू लगाता हो, मोची का काम करता हो अथवा अन्य इस प्रकार का धन्धा करता हो तो उसे वे पिछड़े वर्ग (Backward Class) का व्यक्ति मानते हैं। जो चलता पुर्जा हो, किसी भी ढंग से खूब पैसा कमाता हो, उसे वे समुन्नत (Advanced) मानते हैं, चाहे उसकी आदतें पिछड़ी हुई क्यों न हों।

परन्तु हमें समझना चाहिए कि बुद्धि का विकसित एवं समुन्नत होना तो एक पहलू है जबकि आदतों एवं संस्कारों का अच्छा होना उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। तभी तो कहा गया है कि यदि "धन गया तो मानो कि कुछ नहीं गया परन्तु यदि चरित्र गया तो सर्वस्व गया।" अतः वास्तव में पिछड़ा हुआ वह है जिसके संस्कार अथवा व्यवहार पिछड़ा हुआ है। इस दृष्टिकोण से जो व्यक्ति अपराध करता है, शराब पीता है, सिग्रेट की आदत का गुलाम है, दूसरों को मारता है, जुआ खेलता है तथा अन्य बुरी आदतों का बन्दी है, वह पिछड़ा हुआ है।

आवश्यक सूचना

ज्ञानामृत तथा वर्ल्ड रिन्युवल की सदस्यता शुल्क से सम्बन्धित तथा सेवा-समाचार से सम्बन्धित सभी पत्र ब्रह्माकुमार सुन्दरलाल के नाम इस पते पर भेजा करें—C/o प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय, १९/१७ शक्ति नगर, देहली-७ परन्तु पत्रिका के न पहुँचने के बारे में पत्र ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश, बी-९/१९, कृष्णा नगर, देहली-५१ के पते पर भेजा करें परन्तु मुझ से सम्बन्धित पत्र १५१ ई, कमला नगर, देहली-७ के पते पर भेजा करें।

—जगदीश

सम्पादकीय

कल्याणकारी आत्म बम और परमात्मा बम

२० अक्टूबर को समाचार-पत्रों में एक समाचार प्रकाशित हुआ था कि विश्व के १२ राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल एसेम्बली के होने वाले अधिवेशन के समक्ष एक रिपोर्ट रखी है जिसमें यह चेतावनी दी है कि विश्व सुरक्षित तभी होगा जब विश्व भर से सभी आणविक अस्त्रों-शस्त्रों को समाप्त कर दिया जाएगा। उस रिपोर्ट में कहा गया है कि आज संसार के शस्त्रागार (Armoury) में ४०,००० और ५०,००० के बीच की संख्या में आणविक अस्त्र-शस्त्र हैं जो कि हिरोशिमा पर फेंके गए बम के परिमाण से १०,०००,०० बमों के बराबर हैं। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि इस हिसाब से हर नर-नारी अथवा बच्चे के लिए ३ टन बारूद (T.N.T.) के बराबर संहारक शस्त्र तैयार हैं। आगे इसमें बताया गया है कि यदि इसमें से कभी एक भी बम का प्रयोग किया गया तो वह विस्फोट उसके तुरन्त बाद ही आणविक विनाश ज्वाला के प्रज्ज्वलित होने का निमित्त बन जाएगा।

रिपोर्ट से स्पष्ट है कि 'विनाश काले विपरीत बुद्धि'—इस उक्ति के अनुसार विज्ञान-अभिमानी लोगों ने तो अतुल धन-राशि खर्च करके हर छोटे-बड़े व्यक्ति के लिए ३ टन बारूद के बराबर संहारक शक्ति तैयार कर रखी है जिसे केवल आग की चिंगारी दिखाने-भर की ज़रूरत है। परन्तु अब इधर यह देखने की आवश्यकता है कि नये विश्व की स्थापना के लिए कल्याणकारी 'आत्म बम' और 'परमात्म बम' की कितनी शक्ति संग्रहीत की गई है। सारे विश्व का कल्याण करने के लिए चालीस-पचास हज़ार आत्मिक अस्त्र-शस्त्र भी तो तैयार होने चाहियें। काम शत्रु, क्रोध वैरी, लोभ दुश्मन अथवा मोह एवं अहंकार नामक रिपुओं को नष्ट करने के लिए भी तो कुछ लाख आध्यात्मिक बम तैयार होने ही चाहिएँ। अब यह जो १०-सूत्री कार्यक्रम हो रहा है, यह उसी अहिंसक एवं आध्यात्मिक दल-बल को संगठित, सुसज्जित एवं सशक्त करने के लिए हो रहा है।

हरेक देश की सरकार हर वर्ष अपने शस्त्र-बल एवं सैन्य-बल का प्रदर्शन किया करती है जिसमें वह टैंक, राकेट, मूसल (Missiles) इत्यादि को भी लोगों के सामने लाती है। इसी प्रकार फ़रवरी में देहली में होने वाला कार्यक्रम भी ईश्वरीय शक्ति का एक छोटे पैमाने पर प्रदर्शन अथवा प्रयोग है। इसमें हमें अपने दिव्य गुणों के टैंक, योग शक्ति के विमान, ज्ञान-शस्त्रों से सुसज्जित सैन्य बल को लोगों के सामने लाना है ताकि यह देखकर उन्हें उत्साह और उमंग आये और वे समझें कि अब विश्व में मनोविकारों का विध्वंस करने वाली ईश्वरीय शक्ति एक प्रबल एवं अदम्य अहिंसक सेना के रूप में तैयार है।

ये कल्याणकारी अद्भुत बम हैं—जब कोई बम फटता है तो वह आस-पास काफ़ी विनाश-कार्य करता है। परन्तु यह आत्म बम तो अच्छाई की स्थापना के निमित्त हैं। इससे विनाश केवल मनोविकारों का होता है। ये स्वयं कल्याणकारी परमात्मा द्वारा तैयार किये गए अद्भुत बम हैं जिनसे कोई धमाका नहीं होता बल्कि विश्व-भर में शान्ति फैलती है। इन बमों का उद्देश्य विनाश नहीं बल्कि निर्माण है। ये बम दुःखदायक अग्नि को नहीं प्रज्जवलित करते बल्कि ये तो संसार में योग ज्वाला को प्रद्दीप्त करने वाले बम हैं। डायनामाइट की शक्ति पहाड़ों और चट्टानों को तोड़ कर रख देती है परन्तु यह आत्म

बम मनुष्य की साधना के मार्ग में पहाड़ के समान रुकावट डालने वाली समस्याओं को समाप्त कर देते हैं।

इन आत्म बमों को शक्तिशाली बनाने के लिए इनमें पवित्रता का बल, योग की शक्ति, दिव्यता का प्रभाव आदि भरने की ज़रूरत है। यदि हरेक योगाभ्यासी बहन-भाई ईश्वरीय नियमों तथा मर्यादाओं का पूर्णतः पालन करेंगे, शान्ति तथा सहज राजयोग की शक्ति स्वयं में भरेंगे तथा दिव्यता की ऊर्जा की पराकाष्ठा बढ़ायेंगे तभी फ़रवरी में महा-यज्ञ के अवसर पर सम्पर्क में आने वाले नर-नारियों को कल्याणकारी परमात्म बम का साक्षात्कार होगा। जैसे बम में से शक्ति फट पड़ती है, हम सभी में इतनी शक्ति का संचार तथा संग्रह हो जाना चाहिए कि उस अवसर पर हमारी मधुरता, नम्रता, सद्भावना, शुभ कामना हमारे मन में पूरे ज़ोरों पर हो—इतनी कि वह कल्याणकारी बम की तरह दूसरों के मन को लग कर उनमें पैठे काम, क्रोधादि को समाप्त कर दें। ईश्वरीय शक्ति का प्रभाव इतना प्रबल हो कि आसुरी शक्ति टिक न सके। हमारी योग साधना, शान्ति-साधना और दिव्यता-साधना इतनी शक्तिशाली हो कि "फटा···फटा, धमा-धम, दना···दन···आसुरी शक्तियों का मलियामेट हो जाय।

जगदीश

—:०:—

नहीं पीता बीड़ी को, बीड़ी तुझ को पीती है

ले० बी० के० मोहन (अमृतसर)

स्थाई—तू नहीं पीता बीड़ी को, बीड़ी तुझको पीती है
पी करके यह तुमको भाई, इस दुनिया में जीती है।
तू नहीं पीता

१. इस बीड़ी के कई सम्बन्धी
और रिश्तेदार भी हैं
कैंसर, दमा, खाँसी, टी० बी०
इसके ताबेदार भी हैं
कई बीमारियाँ और मौत की समझो
आख़री सीटी है।
तू नहीं पीता···

२. तेरे पीने से यह पहले
पैसे तेरे खाती है
समय संकल्प और सम्पत्ति
सभी लूट ले जाती है
मानव को नहीं जिन्दा छोड़ना
यही इसकी नीति है।
तू नहीं पीता···

३. तू निकाले इसका धूंवा
यह तेरा धूंवा निकालेगी
तेरे अन्दर जाकर के यह
तेरा सभी कुछ खा लेगी
श्मशान पहुँचाना सबको
यही इसकी ड्यूटी है।
तू नहीं पीता···

४. तू छोड़ना चाहे इसको
यह नहीं तुझको छोड़ेगी
खटिया पर लिटा कर तुझको
तेरा यह दम तोड़ेगी।
अब तू इसको हाथ जोड़ दे
झूठी इसकी प्रीति है !
तू नहीं पीता···

५. पीना इसका छोड़ के भाई
ज्ञान अमृत का पान करो
थोड़ा समय रहा जो बाकी
ईश्वर का तुम ध्यान धरो
छोड़ के इसको आगे बढ़ो तुम
जो बीती सो बीती है।
तू नहीं पीता···

छोटी और बड़ी दीपावली

दीपावली भारत का एक ऐसा विशेष त्योहार है जिसे भारत के प्रायः सभी लोग हर्षोल्लास से मनाते हैं। इस दिन हर छोटे और बड़े, गरीब और अमीर तथा ग्रामीण और नागरिक के चेहरे पर खुशी के चिह्न दिखाई देते हैं। तब रात्रि को दीपों की जगमगाहट का अतीव सुन्दर दृश्य देखते ही बनता है।

इस त्योहार के प्रारम्भ के बारे में किंवदन्तियाँ—इस त्योहार का प्रारम्भ कब और कैसे हुआ ?—इसके बारे में अनेक किंवदन्तियाँ अथवा पौराणिक कथायें प्रचलित हैं। एक आख्यान यह है कि चिरातीत काल में एक समय ऐसा था जब **नरकासुर** ने सारी सृष्टि पर अपना आधिपत्य जमा लिया था। भगवान ने नरकासुर का नाश कर सृष्टि को उसके भय से मुक्त किया और देवताओं को नरकासुर के बन्धन से छुड़ाया। अतः दीवाली से एक दिवस पहले की रात्रि को 'नरक-चतुर्दशी' मनाई जाती है जिसे 'छोटी दीवाली' भी कहते हैं और उसके अगले ही दिन अर्थात कार्तिक की अमावस्या को बड़ी दीपावली से महोत्सव होता है।

दूसरी कथा यह है कि—"दैत्य राजा बलि ने सारे भू-मण्डल पर अपना एक छत्र राज्य जमा लिया था। तब पृथ्वी पर आसुरीयता फैल रही थी और धर्म-निष्ठा नष्ट प्रायः हो चली थी। तब राजा बलि ने श्री लक्ष्मी को सभी देवी-देवताओं सहित अपने कारागार का बन्दी बना लिया हुआ था। उस समय भगवान ने राजा बलि की आसुरी शक्ति पर विजय प्राप्त करके श्री लक्ष्मी व सभी देवी-देवताओं को कारागार की यातनाओं से छुड़ाया। उसी के उपलक्ष्य में तब से हर वर्ष इस रात्रि को दीपोत्सव किया जाता है और घरों के द्वार खोलकर श्री लक्ष्मी का आह्वान किया जाता है।

इन आख्यानों का अर्थ-बोध—ऊपर जिन दो आख्यानों अथवा कथाओं का उल्लेख किया गया है, उनका अक्षरशः अर्थ तो अग्राह्य ही होगा क्योंकि किसी एक व्यक्ति द्वारा श्री लक्ष्मी तथा अन्य सभी देवी-देवताओं को अथवा सारी सृष्टि को बन्दी बना देना तो सम्भव ही नहीं है। अतः वास्तव में इन दोनों कथाओं में एक बहुत महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक वृत्तान्त को लाक्षणिक भाषा में एक रूपक देकर वर्णन किया गया है। ज्ञान दृष्टि के अनुसार नरकासुर माया अर्थात मनोविकारों ही का पर्यायवाची है। काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार को गीता में 'नरक का द्वार' भी कहा गया है और 'आसुरी लक्षण' भी माना गया है। चूंकि इन विकारों अथवा आसुरी लक्षणों पर विजय प्राप्त करना बहुत कठिन है, इसलिए इन्हीं का नाम इस रूपक में बलि है। गीता में माया ही को दुस्तर अर्थात 'बलि' कहा गया है। विश्व के इतिहास में कलियुग के अन्त का समय ऐसा समय है जब इन्हीं विकारों का सब नर-नारियों के मन पर राज्य होता है। तब सारी सृष्टि नर्क बनी होती है। इसलिए कहा जा सकता है कि तब राजा बलि अथवा नरकासुर का ही सृष्टि पर आधिपत्य था। सतयुग में भारत स्वर्ग भूमि था और यहाँ के वासी देवी-देवता थे परन्तु जन्म-मरण के चक्र में आते हुए वे कलियुग के अन्त में सृष्टि को नर्क बनाने वाले और नर-नारी को असुर बनाने वाले इन बलि विकारों के आधीन हो गए थे। तब कलियुग के अन्त में ईश्वरीय ज्ञान देकर परमपिता परमात्मा ने इन विकारों रूपी नरकासुर का अन्त किया और सतयुग में जो मानवी

आत्मायें श्री लक्ष्मी अथवा अन्य देवी-देवता नाम से अभिज्ञात थे, उन्हें इस नरकासुर के बन्धन से मुक्त कराया। इसी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वृत्तान्त की याद में आज भी हर वर्ष कार्तिक के कृष्ण पक्ष को चतुदर्शी को छोटी दीवाली मनाई जाती है और फिर इसके बाद श्री लक्ष्मी और श्री नारायण के स्वतन्त्रता पूर्वक राज्य के शुरू होने अथवा सतयुग के शुरू होने की खुशी में अगले ही दिन अमावस्या की रात को बड़ी दीवाली मनाई जाती है।

दैवत्व की आसुरीयता पर विजय—कई लोग ऐसा मानते हैं कि दीवाली का त्योहार रावण पर राम की विजय के बाद मर्यादा-युक्त रामराज्य प्रारम्भ होने का स्मरणोत्सव है। वास्तव में इसका भी वही भाव है जो कि पूर्वोक्त दो आख्यानों का है क्योंकि रावण आसुरी शक्ति और राम ईश्वरीय शक्ति का प्रतीक है।

ज्ञान-दीप जगाए बिना दीवाली निरर्थक—आज जब लोग दीपावली का त्योहार मनाते हैं तो वे इस मर्म को सामने नहीं रखते कि यह 'नरकासुर' अथवा 'बलि' के अन्त अर्थात आसुरीयता की पराजय और देवत्व की विजय का स्मरणोत्सव है और कि इस दिन अपने-अपने भवन, गली, मोहल्ले और चौराहों में रोशनी करने के अलावा अपने भीतर के अन्धकार को मिटाने लिए अथवा अपने अन्तर्मन में भी ज्योति जगाने के लिए पुरुषार्थ करना चाहिए वे इस बात को भूले होते हैं कि अमावस्या अथवा अन्धकार अज्ञानता एवं विकारों के प्रतीक हैं। आध्यात्मिक भाषा में अज्ञान को 'अन्धकार' कहते हुए ही तो भक्त-जन भगवान से प्रार्थना करते हैं—तमसो मा ज्योतिर्गमय "हे प्रभु, हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो।" इसी आध्यात्मिक अर्थ में ही इन दोनों आख्यानों में कहा गया है कि छोटी दीपावली, बड़ी दीपावली और इन दोनों से पहले की अन्धेरी रात्रि (धन-तेरस) पर जो दीप दान करता है वह अकाल मृत्यु से बच जाता है। दीप-दान करने का भाव भी ज्ञान-दान करना है। दीवाली के इस ज्ञान पक्ष की उपेक्षा का ही यह परिणाम है कि हर वर्ष मिट्टी के दीप अथवा आधुनिक परिपाटी के अनुसार मोमबत्तियों और बिजली से रोशनी कर लक्ष्मी जो का आह्वान करने के बाद भी आज भारत देश में लक्ष्मी जी का स्थाई वास नहीं। यहाँ भ्रष्टाचार ही राजा बलि अथवा नरकासुर बनकर सब पर अपना आधिपत्य जमाये हुए हैं। इसके परिणामस्वरूप भारत के आधे से अधिक लोग निर्धनता के स्तर से नीचे का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। लक्ष्मी जी को तो 'पदमा', 'कमला' इत्यादि नामों से भी याद किया जाता है क्योंकि वे कमल-पुष्प-निवासिनी मानी गई हैं। परन्तु आज हमारे गृहस्थों के घर कमल समान पवित्र ही नहीं बने और उनके अन्तर की ज्योति ही नहीं जगी तब भला विषय विकारों से नर्क बने घर में लक्ष्मी जी का शुभ आगमन कैसे हो सकता है?

दीपावली 'महारात्रि' कैसे है?—यों आज भी साधक लोग दीपोत्सव की रात्रि को साधना के दृष्टिकोण से 'महारात्रि' मानते हैं। उनकी यह धारणा है कि इस रात्रि को मन्त्र की सिद्धि की जा सकती है। अतः वे इस रात को जागकर अपनी मन्त्र साधना करते हैं। यह मान्यता भी कलियुग के अन्त की घोर अज्ञानरात्रि से सम्बन्धित है। कलियुग के इस तमोप्रधान अन्तिम चरण में जो कोई भी परमात्मा द्वारा दी हुई मार्ग प्रदर्शना (मन्त्रणना) के अनुसार चलता है उसको सर्व सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। भक्त लोग यह भी मानते हैं कि जो इस रात्रि को आलस्य के वश सोया रहता है, वह श्री लक्ष्मी के आर्शीवाद से वंचित रहता है। परन्तु वास्तव में यह बात भी आध्यात्मिक जागृति के बारे में कही गई है। कलियुग के अन्तिम चरण में जो व्यक्ति अज्ञान-निद्रा में सोये रहते हैं, वे आने वाले सतयुगी श्री लक्ष्मी और श्री नारायण के सुख पूर्ण स्वराज्य में सौभाग्य का स्थान प्राप्त नहीं कर सकते। इतना ही नहीं, ईश्वरीय ज्ञान लेने के अतिरिक्त संगम युग में

शेष पृष्ट २० पर

"आबू-दर्शन"

ब्र० कु० राजू, गुमला

अरावली की घाटियों में स्थित स्वर्णमयी हरितिमा से लदे भू-भाग का सौन्दर्य किस मनुष्य का मन नहीं मोह लेगा। यहाँ केवल मनुष्य ही नहीं वरन् समस्त जीव-जन्तु स्वतंत्रतापूर्वक मौलाई-मस्ती में विचरण करते हैं। ऐसे तो समस्त घाटियों की शोभा अनुपम है परन्तु इसके मध्य स्थित आबू-पर्वत की शोभा सबसे न्यारी एवं प्यारी है।

इस पर्वत के गर्भ में बसा आबू-नगर संसार भर के लोगों के लिये एक आकर्षण का विषय रहा है। सौन्दर्यमयी पर्वतीय धरातल के साथ-साथ यह ऐतिहासिक-दृष्टिकोण से भी अति प्राचीन है। आबू का नाम इतिहास के पृष्ठों पर हीरे की भाँति झलकता दिखाई पड़ता है जिसके प्रकाश में हम प्राचीन शक्तिशाली वंशों एवं सम्प्रदायों तथा तपस्वियों का दर्शन कर लेते हैं।

आबू का ऐतिहासिक महत्व

माउन्ट आबू का ऐतिहासिक-महत्त्व अति-प्राचीन काल से रहा है। कहा जाता है कि प्राचीन काल में राजपूतों की उत्पत्ति-स्थल "आबू-पर्वत" ही था। इस कथन का वृत्तान्त हमें "चन्द्र-बरदाई कृत" "पृथ्वीराज रासो" में मिलता है इस ग्रंथ में लिखा है कि विष्णु के अवतार परशुराम ने समस्त क्षत्रियों को नष्ट कर दिया किन्तु ब्राह्मणों ने अपनी रक्षा के लिये एक युद्धप्रिय-वर्ग का उद्भव आवश्यक समझा, इस ध्येय की पूर्ति के लिये उन्होंने आबू की चोटी पर ईश्वर से प्रार्थना की और चालीस दिन तक बड़ा हवन (यज्ञ) किया। ब्राह्मणों की प्रार्थनायें सफल हुईं और अग्निकुण्ड से चार नायक निकले, उनमें से प्रत्येक ने एक पृथक राजपूत वर्ग की स्थापना की। इस प्रकार चौहान, सोलंकी (चालुक्य) परमार एवं प्रतिहार वंशों की स्थापना हुई। उपर्युक्त वृत्तान्त अब भी राजपूतों को मान्य है।

इस प्रकार से आबू-पर्वत एक शक्तिशाली वर्ग (राजपूत वर्ग) का उत्पत्ति-स्थल माना जाता रहा है एवं प्राचीन काल से ही यहाँ पर यज्ञ, तप, हवन कर्म-कान्डों की प्रथा प्रचलित रही है।*

तपस्वी-स्थल अथवा तपो भूमि—

आबू की सबसे अधिक महिमा इसके "तपोवन" होने के कारण है। संभवतः प्राचीनकाल के ऋषि-महर्षि हिमालय की कन्दराओं की भाँति आबू की गुफाओं में भी तपस्या करते होंगे। यही कारण है कि आज भी उन तपस्वियों के स्थल का भग्नावशेष हमें आबू की पर्वत श्रेणियों में बिखरी-हुई मिलती है। जब मैंने प्रथम आबू-दर्शन किया तो यहाँ का दिलवाड़ा-मंदिर मुझे काफी आकर्षक लगा और मैं चूँकि इतिहास का विद्यार्थी रहा हूँ अतः मैंने इस मंदिर का तीन बार अवलोकन कर इसकी गूढ़ता को जानने का प्रयास किया।

इस मंदिर की बड़ी-बड़ी मेहराबें, चट्टानों पर नक्काशी एवं उनमें अंकित भाँति-भाँति के शास्त्र

---

*वास्तव में इसका भाव यह है कि जब धर्म ग्लानि हो गयी और पवित्र बनने वालों पर भी प्रहार, कुठाराघात अथवा अत्याचार होने लगा तथा परमपिता ने ब्राह्मणों द्वारा एक यज्ञ (ज्ञान-यज्ञ) की स्थापना आबू में कराई। उस योगाग्नि अथवा ज्ञानाग्नि में से काम, क्रोधादि से युद्ध करने वाले तथा सूर्यवंश का राज्य प्राप्त करने का पुरुषार्थ करने वाले 'राजपूत' पैदा हुए।

सम्बद्ध चित्र हमें प्राचीन भारत की कला एवं संस्कृति की याद दिलाते हैं। संभवतः यह मंदिर किसी सत्य तथ्य को आधार मानकर बनाया गया है और चूंकि यह किसी एक काल में निर्मित नहीं हुआ अतः धर्म की चढ़ती एवं उतरती कला का इसमें सजीव वर्णन किया गया है। इससे प्राचीन भारत की तत्कालीन अवस्था पर भी प्रकाश पड़ता है। उदाहरण के तौर पर महावीर स्वामी की स्वर्ण मूर्ति से हमें भारत में स्वर्णिम काल की, इनकी रजत मूर्ति से मध्य कालीन भारत की एवं श्याम वर्ण मूर्ति से भारत की गिरती अवस्था की जानकारी प्राप्त होती है अर्थात जो मूर्ति जिस युग में बनी अपनी बुद्धि के अनुसार उस युग की स्थिति को देखते हुए उन्हें चित्रित किया गया। सारी मूर्तियाँ तपस्या की अवस्था में दिखाई गई हैं जिससे यह प्रतीत होता है कि आबू तपस्वियों का प्राचीन एवं प्रमुख स्थल रहा है।

इसी प्रकार से 'नकी झील' के करीब ही "विवेकानन्द गार्डेन" "दयानन्द सरस्वती गार्डेन" एवं राम कृष्ण परमहँस के बिखरे हुए मठ में आज भी उन तपस्वियों की आत्मायें आबू को तपोवन बनाये रखने का प्रयास कर रही हैं। आबू धरातल से तीन सौ फीट की ऊँचाई पर स्थित शान्ति-शिखर एवं पाँच सौ फीट की ऊँचाई पर स्थित गुरु-शिखर के माध्यम से हमें शान्ति एवं सद्गति का पाठ दोहराने की प्रेरणा मिलती है।

आबू की सबसे बड़ी शोभा है यहाँ का शान्त गम्भीर एवं सुन्दर नकी-झील जिसमें नौका विहार करते समय ऐसा प्रतीत होता है मानो आकाश में इन्द्र धनुष रूपी नौका पर बैठकर समस्त ब्रह्मांड की सैर कर रहे हों।

आबू के प्राकृतिक सौंदर्य की महिमा करते बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि कविगण तथा लेखक भी नहीं अघाये। यों तो हम काश्मीर को प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से संसार का स्वर्ग मानते हैं एवं दार्जिलिंग शिमला, मसूरी इत्यादि पर्वतीय स्थलों को एक से बढ़कर एक सौन्दर्यमयी स्थल मानते हैं। अगर छोटा नागपुर की पहाड़ियों का दर्शन किया जाय तो यहाँ के नेतरहाट और टांगीनाथ पहाड़ियों के सौन्दर्य को शायद ही कोई छू सके। परन्तु जितनी महिमा आबू पर्वत की है उतनी शायद इसकी नहीं है।

यहाँ के समस्त प्राणी शान्त, अहिंसक एवं दिव्यता की मूर्त्ति से प्रतीत होते हैं। एक बार मुझे एक तेंदुवा दिखाई दे गया था परन्तु वह सामने से इस प्रकार पार हो गया जैसे कोई नई नवेली वधू शर्मा कर सामने से निकल जाती है। कितना शान्त शीतल एवं दैवी गुणों से भरपूर है यह आबू-पर्वत ! इसी-लिये तो महर्षि भारद्वाज जी ने भी आबू को ही अपना तपो स्थल बनाया था। भारद्वाज ऋषि के साथ साथ संभवतः याज्ञवलक्यजी भी आबू-पर्वत से पूर्ण-प्रभावित थे। किसी कवि ने कहा है :—

"जहाँ रामकृष्ण भी आने को
हैं प्रतिपल मन ललचाते
देव दनुज किन्नर गंधर्व,
सब मुख में जल भर लाते।"

उस कवि की वाणी संपूर्ण रूप से सार्थक है। इन सभी विशेषताओं के कारण ही तो परमात्मा भी आबू-पर्वत पर ही अपना बसेरा स्थापित करने को ललचा उठे एवं ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के लिये इसी आबू के गर्भ में एक भव्य भवन का निर्माण कराया जो आज प्रायः सभी यात्रियों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। इतिहासकार सूक्ष्मता से गौर करें तो आबू स्थित ब्र० कु० ई० वि० विद्या-लय (पाँडव भवन) में दिलवाड़ा का चैतन्य रूप दिखाई देगा।

आबू का पांडव भवन एवं राजयोग कक्ष—

पांडव भवन का राजयोग-कक्ष सबसे आकर्षक है जिसमें प्रवेश करते ही व्यक्ति दुनिया की सारी चिंताओं से मुक्त हो एक परमात्मा की याद में स्थित हो जाता है। पांडव भवन के प्रत्येक लोग चलते-फिरते

हर कर्म करते एक फ़रिश्ते के समान दिखाई पड़ते हैं। इनके संपर्क में आने वाला व्यक्ति भी एक प्रकार का ईश्वरीय आनन्द का अनुभव करता है, एक क्षण के लिये अपने शरीर से उपराम अपने आपको आत्मा ज्योतिर्विंदु की स्थिति में स्थित अनुभव करने लगता है। इस प्रकार आबू प्राचीन काल से ही "तपोभूमि" "शब्द" को सार्थक करता आ रहा है और आज भी यहाँ पर लगभग पाँच सौ तपस्वी ब्रह्माकुमार एवं ब्रह्माकुमारियाँ—(भाई बहनें) नित्य ही तपस्या करते हुए देखे जा सकते हैं।

यह तपस्या स्थल नकी-लेक से ऊपर जाने वाली सड़क के किनारे शांत वन में स्थित है। शरद-ऋतु के प्रारम्भ होते ही हजारों देशी एवं विदेशी आत्मायें राजयोग सीखने के अभिलाषी इस अनुपम-स्थल पर आते हैं एवं राजयोग की शिक्षा लेते व अभ्यास करते हैं। इस विद्यालय की एक विशाल एवं आध्यात्मिक चित्रों से सुसज्जित एक संग्रहालय भी है जो नकी-झील से आबू-रोड जाने वाली सड़क के किनारे स्थित है। सच्च में पूछा जाय तो यह आबू नहीं वरन् वही मधुवन है जहाँ निशदिन श्याम की मुरली बजती थी और आज भी शिव की मुरली नित्य ही बजा करती है। इसीलिये तो किसी कवि ने कहा है:—

"आबू नहीं देखा तो कुछ भी नहीं देखा
आबू में बदलती है किस्मत की रेखा"

—:०:—

(मेरे सपनों का भारत पृष्ट ९ का शेष)

पुष्प समान सद्गुणों की सौरम्भ से नव-पल्लवित होगा। वहाँ न बेकारी होगी, न मंहगाई, न तो चरण सिंह बजट गृह स्वामियों को परेशान करेगा। मेरे स्वप्नों के भारत में समृधि और प्रकृति दासी के रूप में सेवा करने के लिए तत्पर होगी। सोने की नगरी होगी मेरा भारत। खेतों में हरियाली झूम उठेगी। वृक्षों पर फल अमृत रस धारण करते होंगे। हर सुबह मधुर स्वर वाले पंछी को चह-चहट से हमारी पलकें खुलती होंगी। किसी कवि ने ऐसे भारत का स्वप्न देखा है—कि 'मेरे देश की धरती सोना उगले, उगले हीरा मोती' दूध घी की नदियाँ बहती होंगी—यह कहावत मेरे स्वप्न के भारत में साकार होगी। वहाँ के बच्चे देवी राजकुमार/कुमारी सरीखे बड़े मीठे और प्यारे दिखाई देंगे। उनकी हर सुबह माँ के मधुर स्वर के गीतों से मुस्कराती कलियों जैसी होगी।

"जहाँ का हर बालक एक श्रीकृष्ण है और हर बालिका एक श्री राधे है" वह मेरे स्वप्नों का भारत है।

वहाँ कोई रोग न होगा। न तो कोई बीमारी होगी। क्योंकि वहाँ कोई बाजारी बीमारी लाने वाली चीजें ही न होगी। सब मेवा मिठाई दूध फल ही खायेंगे। सभी की काया कंचन समान होगी।

यहाँ के सम्बन्ध तो मतलब के हैं। यहाँ के लोग बुजदिल और कायर हैं। तन के बीमार और मन के मैले हैं। वहाँ तो सभी में रीयल्टी और रायल्टी होगी, सभी ईमानदार होंगे। न कभी झगड़े होंगे न गोरे न कालों की लड़ाईयाँ होंगी।

वहाँ एक राजा-रानी, एक धर्म, एक मत, एक भाषा और एक ईश्वरीय कुल होगा। गाँधर्व ब्याह की पवित्र आत्मिक डोरी में युगल सदा प्रसन्न होंगे और यह स्वप्न साक्षात करेंगे कि—"झिलमिल सितारों का आँगन होगा, स्वर्ग हमारा मन भावन होगा।"

ऋषि मुनियों ने जिसे स्वर्ग कहा, कुरान ने जनन्त कहा, ईशू ने हेवन कहा और बहाई धर्म के धर्मस्थापक वहाउल्लाह ने जिसे बहिश्त कहा वही देश मेरे स्वप्नों का भारत है।

मेरे तो यह ख्वाब हैं—कि
"सुबह कभी तो आयेगी
जब दुख के बादल पिघलेंगे और
सुख का सागर लहरेगा,
वह सुबह कभी तो आयेगी"

मेरे सपनों का भारत

कुमारी भावना, पेटलाद

"जहाँ डाल-डाल पर सोने की चिड़िया करती हैं बसेरा, वो भारत देश है मेरा" किसी कवि के इन शब्दों में अपने हृदय की भावना के रंग मैं देख रही हूँ।

जहाँ स्वर्णिम प्रभात की सुनहरी किरण हर दिल को प्रसन्नता से भरपूर कर देती हो, जहाँ की दोपहरी चाँदी बरसाने वाली हो और जहाँ की रात्रि सुहागिन सी झिलमिल सितारों की हँसी से सजी हुई हो वो देश मेरे स्वप्नों का भारत है।

यहाँ की सुबह तो मिलों की कर्कश व्हीसल मानों किसी राक्षस की टीस सी सुनाई देती है। यहाँ की सुबह और शाम का आकाश धुओं से घेरा हुआ होता है। और आँखों में जलन पैदा करता है। यहाँ के मजदूरों के मासूम बच्चे उठते ही रोते हुए माँ माँ खाना दो, माँ बेचारी कल कारखाने या खेतों में गई है—दो चार आने कमाने।

मेरे स्वप्नों का भारत ऐसा नहीं होगा। वहाँ भ्रष्टाचार, अनीति और शोषण का नाम निशान न होगा। स्व० जयप्रकाश जी ने कहा था—"यह समाज वर्ग भेद का है चापक और शोषितों का है, दलित और पीड़ितों का है, भ्रष्टाचार और अनीति का है। यह समाज रहने लायक नहीं है। किसी ने सच कहा है कि जुल्म और लुंटक रिवाज को बदल डालो, इस समाज को बदल डालो।"

मैं तो ऐसा स्वप्न अपने भारत का देखती हूँ। जहाँ महात्मा गाँधी जी का स्वप्न साकार होते हुए नजर आये। जिसे सच्चा रामराज्य कहें, सतयुग कहें जो इशु के शब्दों में ईश्वर का बगीचा कहें। वह देश मेरे स्वप्नों का है।

जब मैं राहों पर भटकते, भीख माँगते अनाथ बच्चों को देखती हूँ तो मेरा दिल आह भर लेता है। मेरे स्वप्नों के भारत में न तो कोई अनाथ होगा न कोई भूखा सोयेगा। अतृप्ति, असंतोष और अभाव के कारण न कोई रोयेगा, न किसी का चेहरा हताशा और निराशा से पीला होगा।

वहाँ तो हर चेहरे पर प्रसन्नता के गुलाब खिलेंगे। कोई चीज पैसे पर बिकेगी नहीं, हर चीज उपलब्ध होगी। न वर्ग भेद होगा न वर्ग विग्रह। अपार समृधि होगी। कोई चीज अप्राप्त नहीं देवताओं के खजाने में, यह उक्ति सार्थक हो जायेगी मेरे स्वप्नों के भारत में।

यहाँ तो बेईमानी का व्यापार है, धोखेबाजी है। राज्य सत्ता नीतिहीन है। अधर्म ने धर्म का नकली चेहरा पहन लिया। यहाँ के बाजारों में लूट का व्यापार है। यहाँ का यौवन गुमराह और खोखला है। बुढ़ापा बेबस और बिस्मार है। यही मृत्यु की परछाई सदा छाई हुई रहती है। अकाल मृत्यु किसी भी सुहागिन का सिंदूर लूट सकती है, छोटी सी कील भी माँ के लाल को छीन सकती है।

ऐसा, ऐसा भारत मेरे स्वप्नों का नहीं हो सकता है। मैं तो ऐसा भविष्य मेरे भारत का देखती हूँ—जहाँ के मनुष्य देवता समान प्रसन्न हों। सम्पूर्ण पवित्र हों। जिनके चेहरे पर सदा प्रसन्नता और सुख का भाव, यौवन नम्र और महान हो, बुढ़ापा सदा आदरणीय और सन्तुष्ट हो। जहाँ हर बच्चे ईश्वर की सन्तान सदृश्य सदा स्नेही और आनन्दित हों।

आज का संसार तो संघर्षमय, प्रेम-विहीन और खोखला बन चुका है। मेरे स्वप्नों के भारत का गृहस्थ जीवन तो ल० ना० समान (लक्ष्मी नारायण समान) एकता, सँवादिता तथा आत्मीय प्रेम भाव से कमल

शेष पृष्ट ६ पर

विद्यार्थी जीवन और आध्यात्मिकता

कुमार यशेष, पाटन

मनुष्य के जीवन का शृंगार विद्यार्थी जीवन है। विद्यार्थी जीवन ही सरस आनन्दपूर्ण और अनेकानेक उमंगों से भरा पूरा रहता है। यह जीवन का एक उज्जवल प्रकाश है। पवित्र प्रवाह है और प्रखंड प्रतिभा है। इसी प्रकार विद्यार्थी जीवन स्वर्णमय जीवन है।

विद्यार्थी जीवन मनुष्य के जीवन की सुनहरी अवस्था है। तभी तो कहा है कि 'स्टूडेन्ट लाइफ़ इज दी बेस्ट लाइफ़।' जिस अवस्था में मनुष्य विद्या का अध्ययन करता है। उसे विद्यार्थी जीवन कहा जाता है। त्याग, तपस्या, सेवा, सदाचार, सादगी आदि प्राचीन काल के विद्यार्थियों के दिव्य गुण थे। जो आज हमें देखने के लिए नहीं मिलते। वे सदैव मानते थे कि "सादा जीवन उच्च विचार बने हमारा देश महान"।

उनकी तुलना में आज के विद्यार्थियों की ओर दृष्टिपात करें तो हम कह सकते हैं कि आज का विद्यार्थी दिन प्रतिदिन चरित्रहीन और अनुशासनहीन बनता जा रहा है। चरित्र तो विद्यार्थी जीवन की महान पूंजी है। जिसे आज का विद्यार्थी गँवा चुका है। तभी तो किसी नीतिकार ने ठीक ही कहा है। इफ़ दी कैरेक्टर इज लास्ट एवरीथिंग इज लास्ट।

वर्तमान समय चलचित्र से ही आज के विद्यार्थी का पतन होता जा रहा है। चलचित्र से ही आज के विद्यार्थी का मन न पठन में लगता है और न कोई रचनात्मक कार्य में। वे रात दिन फिल्मी दुनिया के स्वप्न देखते रहते हैं। वह रोटी खाना भूल जायेगा, लेकिन राजेश खन्ना और राजकपूर बनना अवश्य चाहेगा।

आज आधुनिक शिक्षा प्रणाली भी विद्यार्थी जीवन की वास्तविकता से दूर है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली विद्यार्थियों के नैतिक, चारित्रिक एवं बौधिक विकास के लिए असमर्थ सिद्ध हुई है। आज विद्यार्थी जगत में पानी के बुलबुले के समान अनेक समस्यायें खड़ी हो गई हैं। इन समस्याओं के कारण आज विद्यार्थी-वर्ग दुखी, अशान्त एवं असन्तुष्ट होता जा रहा है। इन अशान्त विद्यार्थियों की मनस स्थिति का वर्णन करते हुए एक कवि ने कहा है कि—

"ज्ञान दूर कुछ कर्म भिन्न,
इच्छा कैसे पूरी हो मन की,
एक दूसरे से मिल न सके,
यह विडम्बना है जीवन की"

यदि आज के विद्यार्थियों को भरत और शिवाजी के समान बनाना हो, उनके भीतर सोई हुई ज्ञान रश्मिओं को जागृत करना हो तो आज के विद्यार्थियों को आध्यात्मिक शिक्षा देनी चाहिए।

सबसे पहले आध्यात्मिकता किसे कहते हैं? उस को जान लेना अति आवश्यक है। आध्यात्मिकता का मतलब आत्म बोध से होता है। अर्थात् मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? क्यों आया हूँ? आदि प्रश्नों का समाधान विद्यार्थियों को स्कूल के प्रांगण में ही मिलना चाहिए। इसी प्रकार मैं आत्मा ज्योतिबिन्दु स्वरूप हूँ। उस परमपिता परमात्मा की अमर सन्तान हूँ। यह भाव आज के विद्यार्थियों में आयेगा तब ही उनमें भ्रातृत्व की भावना आयेगी। उनमें वसुदेव कुटुम्बकम् की भावना जागृत होगी और सारा विश्व एक पारिवारिक एकता के सूत्र में बद्ध हो जायेगा।

ऐसे विद्यार्थी ही इस कलियुगी, पतित, भ्रष्टाचारी दुनिया मिटाकर पावन श्रेष्ठाचारी सतयुगी दुनिया लाकर सारे विश्व का नव निर्माण करेंगे।

गाँधी बापू, अरविंद और टैगोर के रामराज्य का स्वप्ना पूरा कर सकेंगे।

तभी तो हमारे राष्ट्रीय कवि मैथलीशरण गुप्त जी ने योग्य ही कहा है कि

"संदेश नहीं मैं यहाँ स्वर्ग का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया"

—:o:—

बाबा की चाहना

ब्र० कु० राज कुमारी, शालीमार बाग, देहली

माया के नाले में बह न जाना,
यही है बाबा की शुभ चाहना,
सदा सेफ़्टी से रहना।

ग़फ़लत करने की देर नहीं,
माया धर दबोचेगी यहीं,
श्री मत की लाठी ले—
सदा आगे ही बढ़ते रहना,
यही है बाबा की शुभ चाहना।
सदा सेफ़्टी से रहना॥

चढ़ती कला पानी है तो,
याद रख तू मंजिल वो,
और बस इतना करना,
स्वदर्शन चक्र घुमाते रहना,
शिव बाबा की है शुभ चाहना।
सदा सेफ़्टी से रहना॥

न इतना नर्म बन कि निचोड़ा जाए,
न इतना सख्त बन कि तोड़ा जाए,
मन में इतना ही बस रखना,
है सदा मर्यादा में चलना,
तो फिर डर के क्यूँ रहना,
शिव बाबा की है शुभ चाहना।
सदा सेफ़्टी से रहना॥

दूर देशी है तू बाप सरीखा,
धारण कर अब तक जो सीखा,
याद रख अव्यक्ती बन के है जाना,
छोड़ फिर व्यक्ति का बाना,
अवतरित हूँ इस नशे में रहना,
बाबा की है शुभ चाहना।
सदा ही सेफ़्टी से रहना॥

दृश्य आएँगे लुभावने भी,
चाँस मिलेंगे मन भावने भी,
मोहिनी माया के भँवर,
तेरे समक्ष रहेंगे सँवर सँवर,
पर—
तू मोह जाल से बच के रहना,
शिव बाबा की है शुभ चाहना।
सदा ही सेफ़्टी से रहना॥

भूत काल के मोतियों को—
वर्तमान के थाल में,
भविष्य के लिए परोसने,
स्वमान के भाल पे,
स्व स्थिति को पोसने—
हेतू सदा तत्पर रहना,
बाबा की यही शुभ चाहना।
सदा ही सेफ़्टी से रहना॥

सम्पूर्णता की प्राप्ति के लिए निर्णय शक्ति

ले० ब्रह्माकुमार श्याम पचौरी, सिकन्दराराऊ

राजयोग सब योगों में उत्तम है जिसे स्वयं निराकार परम पिता परमात्मा शिव परम शिक्षक बनकर प्रजापिता ब्रह्मा मुख द्वारा सिखलाते हैं। यह ऐसा योग है जिससे मनुष्य से देवता पद अर्थात राजाओं के राजा श्री लक्ष्मी श्री नारायण पद की प्राप्ति होती है। राजयोग के अभ्यास करने वाले पुरुषार्थी को अष्ट शक्तियों—समेटने की शक्ति, सहन शक्ति, समाने की शक्ति, परखने की शक्ति, निर्णय शक्ति, सामना करने की शक्ति, सहयोग शक्ति एवं विस्तार को संकीर्ण करने की शक्ति प्राप्त होती है।

सम्पूर्णता की प्राप्ति के लिए अर्थात सम्पूर्ण मानव बनने के लिए वैसे तो सभी शक्तियों का अपना-अपना महत्त्व है लेकिन इन अष्ट शक्तियों में से यदि निर्णय शक्ति को सर्व शक्तियों की जननी कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी।

समय पर सही निर्णय न ले सकने के कारण मनुष्य समाज में तिरस्कृत एवं अपमानित होता है, लोग उसका मान नहीं करते, उससे किसी गम्भीर विषय पर सलाह नहीं ली जाती। किसी व्यक्ति का मन स्वयं अपने या दूसरे के विषय में जो निर्णय देता है, वह जिस निष्कर्ष पर पहुँचता है, क्या वे सदा सत्य होते हैं या निर्णायक की धारणा में कुछ त्रुटियाँ भी हो सकती हैं? देखने में आता है कि पिच्चानवे प्रतिशत व्यक्तियों के विचार या निर्णय प्रायः गलत होते हैं। उनके चिन्तन के मार्ग में अनेकों ऐसी बाधायें उपस्थित होती रहती हैं जो अनजाने में ही चुपचाप उनकी विचारधाराओं को प्रभावित किया करती हैं।

१. सही निर्णय न ले पाने के कारण

सही निर्णय न कर सकने में प्रथम बाधा भाग्यवाद है। जो कुछ भाग्य में निर्दिष्ट है वही होता है। हम कुछ नहीं कर सकते। नियति का कुटिल चक्र हमारे भाग्य का निर्णय कर रहा है। ड्रामा में होगा तो अमुक कार्य होगा, हम क्यों प्रयत्न करें, क्यों इतना झंझट मोल लें! हमारे भाग्य में ही नहीं है तो क्या कर सकते हैं आदि आदि।

भाग्यवादियों के ये विचार ड्रामा के रहस्य को यथार्थ रीति न समझने के कारण अनुपयुक्त हैं। ऐसे विचार व्यक्तियों में पुरुषार्थहीनता पैदा करते हैं और वे तुरन्त शुद्ध निर्णय नहीं ले पाते।

२. दूसरी बाधा

दूसरी बाधा जातिवाद एवं सम्प्रदायवाद की है। अमुक व्यक्ति हमारे धर्म या जाति का नहीं है, अतः उसके साथ दूसरी तरह का व्यवहार होना चाहिए। अमुक व्यक्ति मेरी जाति, धर्म या प्रान्त का है, अतः उसकी अनुचित सहायता भी मुझे करनी ही चाहिए आदि। ऐसे बिचार व्यक्ति को सही निर्णय नहीं लेने दे सकते और व्यक्ति पक्षपात पूर्ण ग़लत निर्णय करने से संकुचित दृष्टिकोण का माना जाता है। उसे सबका सम्मान और स्नेह नहीं मिल पाता।

याद रखो—हम सब एक हैं

इसके विपरीत यह सोचना कि सभी हमारे हैं। हम सब एक ही परमपिता परमात्मा शिव की सन्तान आपस में भाई-भाई हैं। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी, जैनी—सभी आत्मायें हैं। एक ही घर से भिन्न-भिन्न पार्ट बजाने आये हैं। प्रेम के सागर परमपिता की सन्तान हम प्रेम स्वरूप हैं,

हमारा किसी से कोई वैर-विरोध नहीं है। इस प्रकार की सर्व के प्रति शुभ भावना एवं शुभ कामना मनुष्य को सत्य, न्याय और प्रेम के मार्ग पर अग्रसर करती है। मेरे-तेरे की भावना से ऊपर उठने पर ही सही निर्णय होता है।

३. अति हर चीज़ की बुरी

निर्णय शक्ति को बढ़ाने में तीसरी बाधा अति-भावुकता है। दया, करुणा, प्रेम, सहानुभूति, कृपा आदि एक मर्यादा तक ही उचित है। यदि ये मर्यादा के बाहर चले जायें तो विवेक का इस्तेमाल मनुष्य नहीं कर पाता। हमें अमुक का विशेष ध्यान रखना चाहिए क्योंकि वह हमारा कुटुम्बी, पुत्र-पुत्री या नातेदार है। अमुक ने कसूर किया है फिर भी वह हमारी दया का पात्र है, उसे माफ़ कर देना चाहिए। अमुक मेरा बहुत हितैषी है; पुत्र है, पति है, सम्बन्धी है, तो ईश्वरीय मर्यादाओं का पालन, खान-पान की पवित्रता, ब्रह्मचर्य की धारणा हम उनको नाराज करके कैसे कर सकते हैं? मिथ्या रीति-रिवाज एवं लौकिक परम्परायें हम कैसे छोड़ें? इसमें हमारी लोकलाज का प्रश्न है? भावुकता जन्य ये मान्यतायें मनुष्य को पुरुषार्थ में आगे नहीं बढ़ने देतीं। उसका निज विवेक एवं बुद्धि दब जाते हैं और वह सही निर्णय नहीं कर पाता।

४. निर्णय शक्ति की कमी का चौथा कारण

निर्णय शक्ति को बढ़ाने में चौथी बाधा अत्याधिक कल्पनाशीलता है। काल्पनिक जगत में निरन्तर विचरण करना तथा स्थूल जगत के उत्तरदायित्व, कठोर संघर्ष, कर्म इत्यादि को दृष्टि में न रखना मनुष्य को शेख चिल्ली बना देता है। ऐसे व्यक्ति बड़ी लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं, बड़े-बड़े वायदे करते हैं, काग़ज़ी योजनायें बनाते हैं, किन्तु जब सांसारिक मजबूरियाँ उनके समक्ष आती हैं तब उन्हें काल्पनिक जगत का मिथ्यात्व मालूम होता है। मिथ्याचारी व्यक्ति का कोई निर्णय सही नहीं होता।

५. विकारी मनुष्य ठीक निर्णय नहीं ले सकता

पाँचवीं बाधा मनोविकारों की है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आलस्य एवं भय के वशीभूत व्यक्ति कोई भी यथार्थ निर्णय नहीं कर सकता। इन विकारों की उत्तेजना में विवेक पंगु हो जाता है, नीर क्षीर भावना विलीन हो जाती है। न्याय के स्थान पर व्यक्ति प्रतिशोध की भावना से उत्तेजित हो जाता है। उत्तेजनाएँ एक प्रकार का उन्माद हैं, जिसमें मनुष्य का विवेक स्थिर नहीं रहता और वह विचार निर्णय में गलती कर बैठता है। शाँत होने पर उसे अपनी उत्तेजनाओं की मूर्खता प्रगट होती है। अतः निर्णय शक्ति को बढ़ाने हेतु मनोविकारों पर जीत पाना अति आवश्यक है।

६. पलायनवादी अस्थिर बुद्धि होता है

छटवीं बाधा पलायन वृत्ति की है। ईश्वरीय मर्यादाओं के पालन करने में विघ्न आते हैं। खान पान की शुद्धि, पवित्रता एवं दिव्य जीवन बिताने में पर्याप्त श्रम एवं कष्ट होता है। कौन कार्य के झंझट में पड़ कर आफ़त मोल ले। या सम्बन्धियों को नाराज़ करके लोक-लाज को छोड़ कर माथा पच्ची करे, चलो इसे छोड़ दें। "ज्ञान का पंथ कराल महा-तलवार की धार पै धावन है।" अतः सरल कार्य कर डालें, "भक्ति तो सरल है।" इस प्रकार के व्यक्ति पलायन वृत्ति के हैं जो कठिन संघर्ष एवं जटिल कार्यों से भागते या पलायन करते हैं। पलायन वादी झगड़ालू, दम्भी या उत्साह पूर्ण व्यक्तियों से भयभीत होता है। उसके चित्त में एकाग्रता नहीं होती, उसका मन क्षण-क्षण में तितली की तरह इधर-उधर भागता रहता है, उसमें स्थिरता, एक-निष्ठा, स्वयं अपनी बात पर डटे रहना, चरित्र की निष्ठा, ज्ञान की गहराई, स्वयं विचार करने की योग्यता, मौलिकता इत्यादि सद्गुण नहीं होते। वस्तुतः प्रत्येक ज्ञानी आत्मा को इस वृत्ति का त्याग कर निर्णय शक्ति को बढ़ाना होगा तभी सम्पूर्णता आयेगी।

७. सातवीं बाधा

सातवीं बाधा हीनता की भावना (Inferiority Complex) या उच्चता की भावना (Superiority Complex) की है। आत्महीन व्यक्ति अपने आपको अयोग्य एवं नीचा समझता है, जबकि उच्चता की भ्राँति वाला मिथ्या आभिमानी अपने बराबर किसी दूसरे को नहीं समझता।

आत्महीन व्यक्ति अपने स्वभाव को नहीं पहचानता, उसे अपनी अष्ट शक्तियों में विश्वास नहीं होता है। दूसरी ओर मिथ्या अभिमानी अपने ग़लत कार्यों को भी सही समझता है। उसे अपने अनुचित विश्वास के कारण दूसरों के सही कार्य भी ग़लत नज़र आते हैं और अपने ग़लत कार्यों को भी तर्क देकर वह सही सिद्ध करता है अतः मदमस्त या आत्महीन दोनों ही व्यक्ति सही निर्णय नहीं कर सकते। इसके लिए अपने देह अभिमान को छोड़कर मनमत का त्याग कर श्रीमत के पालन करने से निर्णयशक्ति का विकास होगा।

८. अज्ञानता निर्णय शक्ति में बाधक

सही निर्णय करने में आठवीं बाधा देश, काल, परिस्थिति की अज्ञानता, शक्ति से अधिक कार्य अपने ऊपर ले लेना, कानूनी बातों की अज्ञानता एवं व्यवहार कुशलता की कमी है। जो मनुष्यात्मा को सही निर्णय करने में बाधा डालती है। अतः ऑलराउण्ड बुद्धि तथा बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय को समक्ष रख कर विश्व-कल्याण के पवित्र कार्य में ईश्वरीय रुद्र गीता ज्ञान यज्ञ में अपने तन, मन, धन, समय एवं संकल्पों की सम्पूर्ण आहुति देने हेतु राजयोग के अभ्यास से निर्णय शक्ति को बढ़ाना है। तब ही होवनहार विनाश से पूर्व सम्पूर्णता की प्राप्ति अर्थात मनुष्य से देवता पद की प्राप्ति सहज होगी।

—:o:—

(नेपाल वाले का पृष्ट १६ का शेष)

का कहना नहीं मानते और दोनों में झगड़ा बढ़ता है। सभी काय दिव्य आध्यात्मिक शक्ति की बजाय माया के पाँचों विकारों काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के ज़ोर पर हो रहे हैं। आज सेवा का स्थान स्वार्थ ने और त्याग का स्थान तृष्णा ने ले लिया है। परन्तु इसका परिणाम ये हुआ है कि मानव जीवन सार-रहित और सस्ता बन गया है। आज हर चीज़ महँगी है परन्तु मनुष्य जीवन सबसे सस्ता है।

धर्म और कर्म का समन्वय —

धर्म ही कर्म का आधार है जब मनुष्य धर्म भ्रष्ट होता है तो कर्म भ्रष्ट बन जाता है। यहाँ धर्म का मतलब आजकल के तथा कथित धर्मों से नहीं बल्कि उस आध्यात्मिक शिक्षा से है, जिससे जीवन की धारणायें ऊँची बनती हैं। धर्म का अर्थ ही है धारणा। आज मनुष्य झूठ रूपी रेत की नींव पर सुखी जीवन रूपी भवन का निर्माण करना चाहते हैं परन्तु वो भूल गये हैं कि सच्चाई कभी छिप नहीं सकती है। इसीलिए कहावत है—कि

सच्चाई छिप नहीं सकती बनावट के असूलों से,
खुशबू आ नहीं सकती कभी काग़ज़ के फूलों से।

ज़रा प्रकृति की ओर नज़र डालिए, धरती में गेहूँ का एक बीज कितने फल कितने वर्षों तक देता रहता है। अब ज़रा मनुष्य के व्यावहारिक जीवन की ओर देखें कि यह संसार से कितना कुछ लेता है और उसके बदले में देता कितना है? यही कि लेता अधिक है देता कम, तब उसका अपना जीवन तथा समाज सुखमय कभी नहीं बन सकता। आज तो मनुष्य त्याग और सेवा जैसे शब्द का नाम सुनकर ही घबरा जाते हैं इसका कारण है आध्यात्मिक ज्ञान और आध्यात्मिक शक्ति की कमी। ये शिक्षा केवल एक परम पिता परमात्मा के द्वारा ही मिल सकती है जिससे जीवन सुखमय और आनन्दमय बन सकता है और व्यावहारिक जीवन सुधर सकता है।

"आध्यात्मिकता ही जीवन रूपी पुष्प की सुगन्ध है"

नेपाल रेडियो द्वारा प्रसारित हुआ था यह लेख

लेखिका—ब्रह्माकुमारी शीला, काठमाण्डू, (नेपाल)

आज सारा संसार भौतिकता का पुजारी बन गया है। वह अपने दैनिक जीवन को सुखी बनाने के लिए भौतिक साधनों का ही आधार लेने लगता है और आध्यात्मिकता से दूर होता जाता है। मगर यह जीवन एक फूल है और आध्यात्मिकता इस की सुगन्ध है। आध्यात्मिकता में वह शक्ति है जिसके आगे दूसरी सब शक्तियाँ फीकी लगने लगती हैं। विज्ञान की शक्ति से सिनेमा, रेडियो, टेलिविजन, हवाई जहाज़ तथा रॉकेट आदि मिले। इस के अलावा किसी ने दिल के राज़ बता डाले किसी ने मन की आशायें पूरी कर दी, किसी ने गिरते पहाड़ों को थाम लिया और किसी ने मुर्दों को ज़िन्दा कर दिखाया। परन्तु इन सभी चमत्कारों को देख लेने के बाद क्या मनुष्य की प्यास बुझ गई है? क्या इन चमत्कारों से होने वाली प्राप्ति से इनसान सन्तुष्ट हो गया है? लेकिन नहीं।" मनुष्य की चाहना दिन प्रति दिन बढ़ती ही जाती है। यह सब है अज्ञानता। मगर ज्ञान का सागर वह परमात्मा कौन है और उसका चमत्कार कौन-सा है जिससे नये राम राज्य की स्थापना हो रही है? वह दिव्य ज्योति परमात्मा शिव निराकार है जो स्वयं आकर हमें आध्यात्मिक ज्ञान की शिक्षा दे रहे हैं। आध्यात्मिकता हमें सत्य और अहिंसा का पाठ पढ़ाती है। मगर भौतिकता से प्रभावित होकर मानव समझता है कि झूठ बोले बिना जीवन को सफल बनाना कठिन है। उपन्यास, सिनेमा, शराब, क्लब आदि जैसे मनोरंजन के बिना जीवन कैसे बितायें? इनके बिना जीवन बेकार लगता है। आज मनुष्य जीने के लिए नहीं खाता और पहनता मगर खाने और पहनने के लिए जीता है। चाहे परिवार में कितनी भी तंगी क्यों न हो फिर भी मन-चाहे पदार्थों पर खर्चा करने के लिए धन निकल ही आता है। चाहे मनुष्य कितना भी व्यस्त क्यों न हो इन कामों के लिए उसे समय मिल ही जाता है। मगर परमात्मा का नाम या आध्यात्मिक ज्ञान लेने की न तो मनुष्य को रूचि है और न उसे समय मिलता है। कहावत प्रसिद्ध है कि जहाँ चाह वहाँ राह (Where there is a will there is a way.)

व्यवहार में कुशलता लाने के लिए आध्यात्मिकता

ज्यों ज्यों समय बीतता जाता है सारे संसार में दुःख और अशान्ति के बादल घने होते जाते हैं। दिन प्रति दिन जन साधारण के लिए जीवन का संघर्ष बढ़ता जा रहा है। और जीवन संकटमय बनता जा रहा है। इसका क्या कारण है? यही कि मानव आध्यात्मिकता को छोड़कर भौतिकता को अपने जीवन का आधार बनाता जा रहा है। जैसे आत्मा के निकल जाने पर शरीर बेकार हो जाता है इसी प्रकार आध्यात्मिकता निकल जाने पर जीवन नीरस तथा दुःखी बन जाता है। जब से बच्चा पैदा होता है शिक्षा उसका अंग बन जाती है। पहले-पहल माता-पिता से बच्चे को शिक्षा मिलती है। इसके बाद वह शिक्षक अथवा गुरु के द्वारा शिक्षा प्राप्त करता है। परन्तु फिर भी आध्यात्मिकता का विकास नहीं होता। आध्यात्मिक शिक्षा की आवश्यकता संसार में, समाज में रहते हुए गृहस्थ और व्यवहार को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए होती है न कि घर बार का संन्यास करके जंगल में जाने के लिए। न ही जंगल में जाकर आध्यात्मिक शिक्षा मिल सकती है। आत्मा का परिचय, परमात्मा का परिचय और श्रेष्ठ कर्मों की

पहचान ही आध्यात्मिक शिक्षा है, जिसके द्वारा मनुष्य गृहस्थ व्यवहार में रहते हुए सतकर्म कर सकता है। शिक्षा में आध्यात्मिकता लाने से ही जीवन में तथा विश्व में शान्ति हो सकती है।

आध्यात्मिक शिक्षा की कमी होने के कारण ही चरित्र बिगड़ता है और दिन प्रति दिन अनुशासन हीनता बढ़ती जाती है। क्योंकि आध्यात्मिकता का शिक्षा से नाम ही मिटा दिया है जबकि आध्यात्मिकता ही पवित्रता, सुख, और शान्ति की जननी है।

जब किसी को ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा सुनने के लिए कहा जाता है तो वह कहता है कि हमारे पास समय ही नहीं है। ग़रीब अपनी ग़रीबी की समस्याओं में व्यस्त है तो धनी अपने धन की सुरक्षा और वृद्धि करने में व्यस्त है, मगर यह एक बहाना है। जब कि मानव व्यर्थ के चिन्तन गपशप और इधर-उधर फालतु स्थानों में जाने में कितना समय नष्ट करता है जिसके फलस्वरूप उसे अशान्ति, असन्तुष्टता ही प्राप्त होती है। समय का सदुपयोग, ईश्वर चिन्तन आत्म चिन्तन और ज्ञान चिन्तन में किया जा सकता है परमात्मा की याद में मानसिक एकाग्रता प्राप्त होती है और प्रत्येक कार्य सहज रूप से हो जाते हैं। सर्व शक्तिवान परमात्मा से योग युक्त व्यक्ति को आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होता है, जिससे वह कठिन-से-कठिन कार्य भी सहज ही कर लेता है। कठिनाईयाँ मनुष्य के आध्यात्मिक विकास में सहायक होती हैं। कठिनाईयों का सामना करने से मनुष्य की आत्मा में बल बढ़ता है। ईश्वरीय स्मृति में रहकर प्रसन्नतापूर्वक कठिनाइयों का सामना करना चाहिए क्योंकि योग ही विकारों रूपी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने का एक बहुत बड़ा अस्त्र है। इसलिए हमें अब सावधान होना चाहिए कि समय बहुत कम है। इस संसार में दो चीज़ों का भरोसा नहीं है—वह कौन-सी ? श्वास और समय। ना जाने मनुष्य का कौन-सा श्वास अन्तिम श्वास हो और जीवन का कौन-सा समय अन्तिम समय हो। इसलिए जीवन में आध्यात्मिकता का होना अति आवश्यक है।

एक दृष्टान्त —

इस पर मुझे एक कहानी याद आती है—एक बार एक नाव में ३ व्यक्ति सवार होकर एक नदी को पार कर रहे थे। कुछ समय के बाद एक व्यक्ति जो साहित्यकार था उसने पूछा—अरे नाविक, तुमने कभी साहित्य पढ़ा है ? तो वह कहने लगा नहीं मैं तो अनपढ़ हूँ और मेरे पिताजी ने मुझे पढ़ाया ही नहीं है इसलिए मैं नाव चलाने लग पड़ा हूँ। इस पर साहित्यकार ने कहा लो, अब तो तुम्हारे जीवन का एक चौथाई हिस्सा ख़तम हो गया। फिर दूसरे व्यक्ति ने कहा—अरे नाविक, बोलो तुमने कभी सिनेमा देखा है ? तो नाविक ने कहा कि मैं तो ग़रीब हूँ मेरे पास इतने पैसे ही कहाँ हैं जो मैं सिनेमा देखूँ। तब उस व्यक्ति ने कहा कि तब तो तुम्हारे जीवन का आधा हिस्सा ख़तम हो गया और फिर सभी हँस पड़े। कुछ समय के बाद एक वैज्ञानिक ने पूछा—अरे माँझी तुमने कभी राकेट देखा है ? तो माँझी ने कहा मैंने तो इसका नाम ही आज सुना है। तब वैज्ञानिक ने कहा कि तब तो बस तुम्हारे जीवन के तीन हिस्से ख़तम हो गए। और सभी खूब हँसे। कुछ समय के बाद हवा बहुत ज़ोर से बहने लगी, तूफान आने लगा। माँझी ने उन तीनों व्यक्तियों को कहा कि तूफान ज़ोरदार है, बचना मुश्किल है। बोलो आपको तैरना आता है ? तो तीनों ही इकट्ठे बोले नहीं, हमें तो तैरना नहीं आता। माँझी ने कहा कि तब तो आपका सारा जीवन ही बेकार है। इस कहानी का भावार्थ यही है कि सब कुछ जानते हुए भी जिस मनुष्य के जीवन में आध्यात्मिकता नहीं है उसका जीवन भी बेकार है। आध्यात्मिक शक्ति का जीवन से उतना ही सम्बन्ध है जितना आँखों से ज्योति का अथवा सूर्य से प्रकाश का होता है। आध्यात्मिक शक्ति ही जीवन रूपी भवन की नींव है। तलाक बढ़ रहे हैं, बच्चे बड़ों

शेष पृष्ट १४ पर

मातेश्वरी की वाणी

प्रेषित—ब्रह्माकुमारी सुधा, बुरहानपुर द्वारा (१४ जून, सन् १९६४ को)

गीत—धीरज धर मनवा···

यह धीरज देने वाला कौन है ? जानते हो ? ऐसा धीरज कोई मनुष्य नहीं दे सकता कि सुख के बड़े दिन आयेंगे, छोटे नहीं। छोटे याने क्षण-भंगुर, अल्प काल का सुख। बाप कहते हैं—तेरे सदा काल के दिन आयेंगे। वह है जन्मजन्मान्तर का सुख। यह है अल्प काल का सुख। बाप (परमपिता) कहते हैं कि इस अल्प काल के सुख को सुख न समझ बैठो। मनुष्य समझते हैं कि स्वर्ग भी यहाँ है नर्क भी यहाँ है परन्तु अब की दुनिया को कहा जायेगा 'नर्क' अथवा 'दुःख की दुनिया।' बाप (शिव परमात्मा) बताते हैं तेरा जो सदा काल का सुख का जीवन, जिसमें सर्व प्राप्ति थी, वह दुनिया ही दूसरी थी। अब बाप हमारी नज़र वहाँ दौड़ाते हैं, जहाँ से नज़र निकल गई थी। यहाँ भले ही कोई धनवान हो या सुखी हो परन्तु उसमें कोई न कोई कमी है। इसलिये इच्छा बनी ही रहती है। इसलिए सर्व प्राप्ति तो नहीं कहेंगे। क्या मनुष्य की यही स्टेज है कि सदैव इच्छा बनी रहे ? क्या ऐसी भी कोई प्राप्ति है जिसमें कम्पलीट सन्तुष्ट रहें ? वह स्टेज भी है ज़रूर। अब हमारी बुद्धि उधर चली गई है।

भक्ति मार्ग में जो पुरुषार्थ करते हैं उनकी प्राप्ति अल्पकाल के लिये इस ही दुनिया में मिलती है। और जो हमारे कर्म हैं वह हैं निराली दुनियां के लिए। इसलिये हमारे कर्म भी निराले हैं। उसका फल भी निराली दुनियां में मिलेगा। बुद्धि में अच्छी रीति बिठाना है। इसलिये बाप जो श्रेष्ठ कर्म सिखाते हैं उनकी तुलना विवेकानन्द से नहीं की जा सकती, यह तो पुरुषार्थ कराने वाला ही निराला है। उनके सिवाय कोई धीरज दे नहीं सकता। यह स्वयं अकेला एक ही है। हम भी एक ही बार उनके द्वारा सर्व प्राप्ति करते हैं। अपना सौभाग्य प्राप्त करने का पुरुषार्थ करते हैं। कल्प-कल्प यह सौभाग्य हम ही पाते हैं। हम हकदार बच्चे हैं। अपने पास यह नशा रहना चाहिये। अब लिया सो लिया। इसलिये थोड़े में राज़ी नहीं होना है। मेरे बाप का हक मैं नहीं लेता तो लेगा कौन ? ऐसा नशा होना चाहिये।

बाप कहते हैं—"बच्चे, अब स्याने बनो। थोड़ी छोटी-मोटी बात पर रूठना छोड़ दो। रूसा-रूसी में बाप को ही न छोड़ देना। बाप कहते हैं—"बच्चे, एक दूसरे को मत देखो। तुमको मुझे देखना है। वर्सा तो मेरे से लेना है। मेरे से रूठेंगे तो वर्सा ही गुम हो जायेगा। यह नुकसान बाप को नहीं परन्तु अपने आप का करते हो। तुम अपने लिये करते हो। हमारे लिये बुरा भी करते हो तो हमारे लिये नहीं अपने लिये करते हो। यह बात बुद्धि में हो तो कभी भी भाव-स्वभाव में नहीं आ सकते। फिर चाहे दीदो हो या दादी हो। २५ वर्ष की हो या १४ वर्ष की पुरानी हो। कुछ भी कोई करे परन्तु तुम तो अपने बाप और वर्से को मत भूलो। आत्मा परमपिता परमात्मा की वारिस है। और किसी को नहीं देखना है। और भी कोई बुराई करे तो प्यार से बैठ समझाओ। अगर समझाने की स्मृति है तो। अगर नहीं है तो समझना चाहिये कि जो करता है, सो पाता है। फिर हम उसका दुःख क्यों भोगें। हमारे तो सुख के बड़े दिन आने वाले हैं। अब इन छोटे दिनों से (अल्प काल के सुख) पेट नहीं भरता। अब तो बड़े दिन आने चाहियें। इसलिये बाप कहते हैं धीरज धरो और जो मैं कहता हूँ उसको

मानो। नहीं तो देखो छोटी-मोटी बात पर मुख फिर जाता है कइयों का तो पाँव ही हिल जाता है। अब बाप द्वारा रोशनी मिल रही है तो अपने सौभाग्य बनाने में जुट जाना चाहिये। हिमम्त रखनी है। सहन करने से और ही पावर मिलेगी। उसका दुःख करोगे तो पावर नहीं मिलेगी। इसलिए सहन करते सदा हर्षित रहो। फिर ऐसा बाप न मिलेगा। हरेक को अपने से पूछना है कि हम बाप से पूरा वर्सा ले रहे हैं। पीछे के दिन बहुत याद पड़ेंगे। बहुत पछताना पड़ेगा।

यह तो समझते हो कि हरेक के संस्कार अपने-अपने हैं। तो संस्कारों का टक्कर तो होगा परन्तु टक्कर से टकराना नहीं है। इसलिए सावधान किया जाता है। यह चीज़ दूसरे कहीं से भी नहीं मिलेगी। यह देने वाला सर्व समर्थ है। समझा? कान खोल कर सुनो। यही आवाज़ आत्मा कानों से सुनेगी। जो समझेंगे कि बाप सुना रहे हैं, जो पुरुषार्थ करते हो अपने लिये। पता नहीं इस बात को क्यों भूल जाते हो। यह बुद्धि में बैठ जाये तो अपने पाँव पर खड़े हो जावो जो फिर ऐसे भी नहीं कि अच्छा कहीं भी हो करना तो अपने को है। भला थोड़ा दिन न आकर देखो तो क्या हाल होता है। वह खुमारी नहीं रहेगी। संग ज़रूर चाहिये। समझदार बनो। बाप हमको बहुत समझदार बना रहे हैं।

अच्छा।

—:०:—

(छोटी और बड़ी दीपावली पृष्ट ५ का शेष)

ईश्वरीय ज्ञान दान देने का भी बहुत महत्त्व माना गया है। इसलिए भी दीपावली की महारात्रि को दीपदान करने का भी बड़ा महत्त्व है। इस दिन कुछ लोग तो दीपकों को अपने मस्तक पर घुमाकर दान कर देते हैं। वे समझते हैं कि इससे सर्व अनिष्ट निवृत्ति होती है। स्पष्ट है कि सर्व अनिष्ट निवृत्ति तो ज्ञान द्वारा आत्मा का दीप जगाने से ही हो सकती है। संगम युग में मनुष्यात्माओं का जीवन-दीप अलौकिक होने के फलस्वरूप ही नर श्री नारायण और नारी श्री लक्ष्मी पद को अथवा देवता या देवी पद को प्राप्त करते हैं तभी सतयुग का आरम्भ होता है। इसी के उपलक्ष्य में दीवाली के अवसर पर लोग अपने घरों पर पताका फहराते हैं और यह भी कहा जाता है कि इसी दिन राजा पृथु ने पृथ्वी पर अपना चक्रवर्ती राज्य प्रारम्भ किया था और यह पृथ्वी हरी-भरी तथा सुख समृद्धि पूर्ण हुई थी जबकि इससे पहले यहाँ पर दरिद्रता थी।

बड़ी दीपावली सतयुगी श्री नारायण-राज्य की यादगार—दीवाली के अवसर पर लोग प्रायः नये कपड़े पहनते हैं, कुछ नये बरतन खरीदते हैं और पुराने बही खाते अथवा आय-व्यय पंचिकाओं को बन्द कर के नये बही खाते शुरू करते हैं। ये सब नई सृष्टि में सुख-शान्ति-पूर्ण नये युग के आरम्भ के सूचक हैं।

अब फिर से कलियुग के अन्त और सतयुग के आदि के संगम का समय चल रहा है जबकि हमें अपने पुराने हिसाब-किताब को समेटने का पुरुषार्थ करना चाहिए और ईश्वरीय ज्ञान तथा योग के द्वारा घर-घर में ज्ञान-दीप जगाने की सेवा करनी चाहिए क्योंकि सर्व अनिष्ट निवृत्ति का मात्र यही एक साधन है। इससे ही भारत में दरिद्रता समाप्त होगी और यहाँ सुख-शान्ति के सतयुग के दिन आयेंगे। दीवाली को सही रीति से मनाने का तरीका यही है।

—:०:—

खूनी नाहक खेल

ब० कु० अरविंद भाई कायडिया, सूरत

आजकल क्रिकेट के खेल को लगभग सब जानते हैं, पसंद भी करते हैं लेकिन इस संसार के खेल को कोई नहीं समझता और बहुत लोग इस खेल को ना-पसंद करते हुए भगवान से फरियाद करते हैं कि "दुनिया बनाने वाले क्या तेरे मन में समाई, तूने काहे को दुनिया बनाई ?" वास्तव में मनुष्य अनादि-अविनाशी रचियता और रचना के इस खेल के आदि-मध्य-अंत को रिचक भी नहीं जानते हैं और आज की इस बनी-बनाई को भगवान की रचना मानकर मूंझते हैं कि क्या भगवान की माया है !! किन्तु असल में परमात्मा तो माया को भगानेवाला, बिगड़ी को बनानेवाला है, बिगाड़ने वाला नहीं है । परन्तु संसार की इतनी बिगड़ी हुई दशा को देखकर भगवान से बिगड़कर मनुष्य चिल्लाते हैं कि "चारों तरफ़ लगे हैं बरबादियों के मेले" । तो अब हमें आपको यह बताते हुए हर्ष हो रहा है कि वह दूर का मुसाफ़िर हमारा सच्चा साथी बनकर हमारी बिगड़ी को बनाने के लिए आया हुआ है—यह समझने से बिगाड़नेवाला शैतान आपकी नज़रों से छिपा नहीं रहेगा। जैसे कभी भी प्रकाश को देखने वाला मनुष्य सदा अंधियारे में रहते हुए भी अंधकार को नहीं समझ सकता है वैसे ही ज्ञानसूर्य परमात्मा के दिव्य अवतरण के द्वारा दिव्य ज्ञाननेत्र प्राप्त किये बिना 'अज्ञान क्या है और जीवन व जगत में वह कैसे छाया हुआ है'—इस सत्य को अज्ञानरात्रि में भटकते हुए भी नहीं समझ पाते हैं, और इसीलिए प्रार्थना करते हैं कि "आज अँधेरे में हैं हम इन्सान, ज्ञान का सूरज चमका दे भगवान" ।

कहीं सोते न रह जाना !

दिन होने से पहले जब सूर्योदय होता है उस प्रातः काल का दृश्य और वातावरण अत्यंत सुहावना और मनोहर होता है किन्तु उस समय सूर्य चमकता हुआ नहीं दिखाई देता। इसलिए उस वक्त बहुत कम मनुष्य अपनी निद्रा को त्याग करके उगते हुए सूर्य की पहली किरण से पुलकित हो सकते हैं, बाकी सब तो चमकते हुए सूर्य को ही नमस्कार करते हैं। ठीक ऐसे ही इस धर्मग्लानि की अमावस्या जैसी कलियुगी कालिमा के बीच पिछले ४४ वर्ष से उगते हुए ज्ञान सूर्य परमात्मा को बहुत ही कम मनुष्य अपनी अज्ञान-निद्रा त्याग कर देख पाये हैं और अब सृष्टिचक्र की अमृतवेला की अनमोल घड़ियाँ गुज़रकर ज्ञान सूर्य की पवित्रता और शांति की किरणें विश्व में फैल रही हैं और देखते-ही-देखते यह ज्ञानसूर्य विश्व के बीच चमक उठेगा तब सर्व मनुष्यात्माएँ साष्टांग नमस्कार करने दौड़ेंगी; अभी तो दूर से ही नमस्कार करना उचित समझती हैं। नींद से उठते समय आलस्यवश अक्सर यही ख्याल आता है कि "अभी सुबह होने में बहुत देरी है", ठीक वैसे ही आज का मनुष्य तमोगुणी संस्कारों के वश समझ रहा है कि सतयुग का सबेरा होने में ४,२७,००० वर्षों की देरी है और इस नशीली नींद से जागने से पहले ही संगम युग की ट्रेन पुरुषार्थ व प्रभु मिलन का प्लेटफार्म छोड़ देती है। इसीलिए गाया हुआ है कि (भाग्यविधाता ब्रह्माबाप द्वारा) भगवान ने जब भाग्य बाँटा तब कई लोग सोये पड़े थे। जब यह ईश्वरीय गीता ज्ञान का सूर्य प्रायः लोप हो जाता है, ईश्वरीय पढ़ाई संपूर्ण होकर अंतिम आणविक लड़ाई शुरू होने के पश्चात परम प्यारा परमपिता परमात्मा परमधाम वापस चले जाते हैं तब मनुष्यमात्र को मालूम पड़ता है कि साक्षात् भगवान स्वयं ही इस सृष्टि पर पधारे हुए थे ?!!

गहराई से सोचने पर मालूम होता है कि यह खेल ऐसा क्यों बना हुआ है ? क्योंकि यह एक भूल वाला खूनी नाहक खेल है अर्थात् खेल-खेल में नाहक खून बहने वाला है और फिर 'नाहक किया-नाहक हुआ' ऐसे पश्चाताप कराने वाला यह धर्मराजपुरी का खेल है। मनुष्य संस्कृति की बर्बरता के नाखून हिंसा के प्रतीक बनकर कयामत के कतलेआम में मशगूल हैं। यह रूहों के सूक्ष्म खूनीयों का खेल है। खून-खराबी करके खेल को ख़तम कराने वाला यह खेल है अर्थात् पवित्रता पाने और गँवाने के लिए जीवन और मौत की यह बाजी है। यह जीतेजी मरने और मारने का खेल है। अधर्म का राक्षस सबको कच्चा खा जाने की ताक में खड़ा है। भय और आतंक से भरे हुए इस खेल में जीत उन महाकाल के बच्चों की होगी जो कि पहले से ही इस महाभारत के धर्मयुग को अच्छी रीति जानते होंगे। इसीलिए भक्त भगवान को पूछते हैं कि "कुछ बोल प्रभु ये क्या माया, तेरा खेल समझ में ना आया"। अब स्वयं प्रभु जी अवतरित होकर यह खूनी नाहक खेल समझाने के लिए ज्ञान की मुरली सुना रहे हैं और होवनहार देवी-देवताएँ प्रभु वाणी द्वारा इस खेल को अच्छी रीति समझकर कर्म-क्षेत्र के मैदान में वाणी से परे होकर बेहद का खेल खेल रहे हैं, बाकी सब आत्माएँ भक्तों की तरह तालियाँ बजा रही हैं।

—:०:—

ईश्वर हमें सिखाते

ले०—ब्रह्माकुमार सुरेश ढेंकानाल, उड़ीसा

शिव बाबा कहते हैं—"हे मीठे-मीठे बच्चों !"

क—कमल समान बनो। कर्म योगी बनो।
ख—ख़ज़ाना (ज्ञान का) लूटते रहो। खीर-खण्ड होकर चलो।
ग—गम्भीरता और रमणीकता का बैलेंस (Balance) रखो।
घ—घड़ी-घड़ी मुझ बेहद के बाप व घर को याद करो।
च—चिन्ता छोड़ प्रभु चिन्तन करो।
छ—छि: छि: दुनिया में मन मत लगाओ।
ज—जज बनो (खुद का)।
झ—झटके से शिव बाबा पर सूक्ष्म रूप से बलि चढ़ो।
ट—टीचर बनो (खुद का) टिकिट लो (स्वर्ग का)।
ठ—ठण्डे मिजाज़ के बनो।
ड—डंका बजाओ (ज्ञान का)।
ढ—ढलना नहीं बढ़ना है।
त—त्याग, तपस्या और सेवा ही ब्राह्मण जीवन का आधार है।
थ—थुर (Foundation) को मज़बूत बनाओ।
द—दिलवर बाप के दिल तख्त नशीन बनो।
ध—धीरज रखो, अधीर्य न बनो।
न—निद्रा जीत बनो। निन्दा हमारी जो करे मित्र हमारा सो।
प—पवित्र बनो योगी बनो।
फ—फल की आशा न रख कर्म किये जाओ।
ब—बेहद की दृष्टि और वृत्ति रखो।
भ—भाव को समझो शब्द को मत पकड़ो।
म—मनमनाभव ही मूल मंत्र है।
य—योग युक्त और युक्ति युक्त बनो।
र—रहम दिल बनो।
ल—लॉ फुल और लव फुल—दोनों का बैलेंस रखो।
व—वरदानी, कल्याणी बनो।
श—शव को न देख शिव को देखो।
स—सर्व शक्तिवान की सन्तान मास्टर सर्वशक्तिवान बनो
ह—हर्षितमुखता ही सच्चा सौन्दर्य है।

अच्छा हुआ

ब्रह्माकुमारी सन्तोष, राजौरी गार्डन

अच्छा हुआ--"ये शब्द आमतौर पर हमें सुनने को मिलते हैं। एक दिन में अनगिनत बार इन शब्दों का हम प्रयोग करते हैं। यह तो आप जानते हैं कि हरेक शब्द के पीछे कोई-न-कोई भाव छिपा होता है। आपको कोई अपशुगन वाली बात बताते हैं तो भी आपके मुख से निकल पड़ता है—"अच्छा।" आप किसी से बिछड़ कर जा रहे हैं तो भी जाते समय कहेंगे—"अच्छा जी।" इसका मतलब यह है कि हम जो कुछ करते हैं, चाहे वर्तमान की दृष्टि में यह बुरा है, परन्तु उसमें भी अच्छाई समायी होती है। इसलिए कहावत है—"ईश्वर जो कुछ होता है अच्छा ही होता है।" अब ईश्वर तो है ही सर्व आत्माओं के पिता और सर्व के कल्याणकारी। उनके हरेक कर्तव्य में कल्याण ही छिपा हुआ है। परन्तु मनुष्य भी जो करता है, अच्छा ही करता है। कभी-कभी हम एक दृष्टि को लेकर देखते हैं तो हमें बुरा भी लगता है परन्तु यदि हम त्रिकालदर्शी और त्रिनेत्री बनकर देखें तो उसमें अवश्य अच्छाई समायी हुई होती है।

आप देखिए कि अनायास ही आपके मुख से निकलता है—"अच्छा", 'अच्छा जी' अथवा 'अच्छा हुआ' तो यह शब्द प्रमाणित करते हैं कि एक तो हम आत्माओं की वास्तविक स्टेज अच्छाई ही की है। हम आत्माओं के मूलभूत गुण अच्छाई के हैं। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में अच्छा बनने की कोशिश करता है। उसे अच्छाई अच्छी लगती है। बुराई से वह दुःखी; अशान्त और परेशान हो जाता है। परन्तु अच्छा बनें कैसे वह शक्ति उसमें नहीं है।

दूसरा यह वाक्य इस बात को प्रमाणित करता है कि जो कुछ होता है अच्छा ही होता है। देखिए, इस सृष्टि चक्र में पाँच युग होते हैं—सतयुग, त्रेतायग, द्वापर युग, कलियुग और पुरुषोतम संगम युग।

वर्तमान समय कलियुग का अन्त और सतयुग का आखिर कल्याणकारी पुरुषोत्तम संगम युग चल रहा है। जब स्वयं निराकार परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रविष्ट करके सर्व मनुष्यात्माओं की गति और सद्गति करते हैं, तो वर्तमान समय कल्याणकारी होने के कारण जो होता है उसमें कल्याण ही समाया होता है। इसीलिए मुख से ऐसे शब्द निकल पड़ते हैं। आपने एक कहानी सुनी होगी कि एक राजा के पास एक मन्त्री था; वह कहता था कि ईश्वर जो करता है अच्छा करता है।" एक बार राजा की अंगुली कट गई तो मन्त्री ने कहा ईश्वर जो करता है अच्छा करता है ? राजा को क्रोध आ गया। राजा ने कहा एक तो मेरी अंगुली कट गई ऊपर से कहता है—अच्छा हुआ। राजा ने मन्त्री को जेल में डाल दिया। एक दिन राजा शिकार खेलने गया। वहाँ कई लोग देवी की पूजा कर रहे थे उन्होंने एक व्यक्ति को बलि चढ़ाना था। उन्होंने राजा को देखा और पकड़ लिया कि राजा की बलि चढ़ाएँगे। जब बलि चढ़ाने लगे तो देखा राजा की अंगुली कटी हुई है। तो उन्होंने राजा को छोड़ दिया। कहा जिसका कोई भी अंग कटा होता है, उसकी बलि नहीं चढ़ाते। राजा को मन्त्री की बात याद आ गई कि ईश्वर जो करता है अच्छा ही करता है। राजा ने जाते ही मन्त्री को जेल से निकाला और कहा आपकी बात ठीक है, नहीं तो आज मैं मौत का शिकार हो जाता। फिर राजा ने कहा—अच्छा मन्त्री जी एक बात बताओ कि आप जेल में रहे इसमें क्या अच्छाई थी। तो मंत्री ने कहा—"अगर आप मुझे जेल में न डालते तो मैं भी आपके साथ शिकार खेलने जाता तो मुझे बलि चढ़ा

देते। तो यह सुनकर राजा ने महसूस किया कि सच-मुच ईश्वर जो करता है अच्छा करता है।" तो इस कहानी से भी हमें यह पता चलता कि हर बात में कल्याण अवश्य समाया होता है। इसलिए हमें किसी भी घटना व परिस्थिति में दुःखी न होकर उसमें कल्याण समाया जानकर उस परिस्थिति को पार करेंगे तो परिस्थितियों में स्वस्थिति को नहीं भूलेंगे और खुशी का अनुभव करेंगे।

वास्तव में ईश्वर का कार्य तो अच्छी (सतयुगी और त्रेतायुगी) सृष्टि की स्थापना और पालना कराना है। अतः उनका कार्य तो अच्छा ही है। कलि-युगी, बुराई वाली एवं दुःखी सृष्टि का महाविनाश भी तो अच्छा ही है। बाकी संसार में जो कुछ हो रहा है वह ईश्वर नहीं कर रहा है। मनुष्य ही अपने कर्म कर रहा है और उसका फल पा रहा है। परन्तु यदि हम हर वृत्तान्त अथवा घटना में अच्छाई देखेंगे तो हमें शान्ति प्राप्त होगी। तो कल्याणकारी पुरुषोत्तम संगम युग पर कल्याणकारी शिव के साथ सम्बन्ध जोड़ने से हम बुराइयों को अच्छाई में परिवर्तित कर सकते हैं और अपने हरेक कर्म को अच्छा बनाकर जीवन अच्छा बना सकते हैं। तो फिर जो शब्द केवल मुख से निकालते हैं वह प्रेक्टीकल में प्रयोग कर सकेंगे।

—:०:—

(ज्ञानचक्षु—पृष्ट २७ का शेष)

इसी को ही हम मनो विज्ञान कह सकते हैं। इसी "ज्ञानचक्षु" से हम अपने जीवन का भविष्य देख सकते हैं और वह देवता-समान हो जाता है।

समझो एक छोटा नन्हा-सा बालक है। और एक बड़ा आदमी उस छोटे मुन्ने को बहला रहा है। कभी क्रोध करके दिखाता है, कभी उसके साथ बात करके देखता है तो छोटे मुन्ने के चेहरे पर कभी रोने के भाव होते हैं। कभी तुरन्त ही हंस देता है। कभी बात भी करने लगता है। वह भले ही रोयेगा, हंसेगा, लेकिन उस रोने व हंसने का दूसरों के प्रति इफ़ेक्ट उस बालक के मन पर नहीं होगा, उस बालक को हम अज्ञानी बालक कहते हैं। एक तरफ अज्ञानी कहते हैं, दूसरी तरफ कहते हैं, यह बच्चे भगवान के सच्चे बच्चे हैं, गीत भी है ना "बच्चे मन के सच्चे, सारे जग की आँख के तारे। ये जो नन्हें फूल हैं, वो भगवान को लगते प्यारे।" इस गीत का आध्यात्मिक रहस्य यह है, कि बच्चे सच्चे दिल वाले होते हैं। उनका मन सच्चा, पवित्र रहता है, पवित्र दृष्टि, वृत्ति भी रहती है, इसीलिए भगवान को बच्चे प्यारे लगते हैं।

शिव बाबा भी हमें "बच्चे" "मीठे बच्चे" कह कर पुकारते हैं। चाहे वह बूढ़ा हो या जवान, गरीब हो या साहूकार "बच्चा"—यह ऐसा शब्द है जो बचपन याद दिलाता है। इस पर एक कविता भी है "बचपन के दिन भुला न देना।" आज के ज़माने में तो बचपन में जो गुण रहते हैं वे गुण बड़ा होने के बाद कायम नहीं रह सकते। आज का छोटा बच्चा देवता समान है वही बच्चा बड़ा होने के बाद आसुरी गुण वाला बन जाता है इसलिए बचपन के देवता-जैसे गुण बच्चों में कायम रहने के लिए शिव बाबा ने हमें नैतिक व आध्यात्मिक शिक्षा दी है।

शिव बाबा ने हमें "ज्ञान चक्षु" दिये हैं जो इस चक्षु द्वारा हम अपना भविष्य जीवन उज्जवल देख सकते हैं। भविष्य की नई सतयुगी दुनिया का दृश्य हम देख सकते हैं। वहाँ की चाल-चलन, बोल, कर्म, दृष्टि, वृत्ति, कृति हम यहाँ देख सकते हैं।

शिव बाबा ने हमें ज्ञान दिया है देखने के लिए और देखने के साथ-साथ चलना भी होता है। "चलना" माना बाप की दी हुई श्रीमत को धारण करना, देखेंगे तो धारण भी कर सकेंगे। तो देखना क्या है? बाबा के दिये हुए ज्ञान अर्थात "ज्ञान चक्षु" द्वारा देखना है। यही ज्ञानचक्षु हमें कर्मातीत अवस्था तक पहुँचा देते हैं। ऐसे देखने वाले को दुनिया की कोई स्थूल चीज आकर्षित नहीं करती वह अपने निजी स्वरूप में स्थित होकर भविष्य का ही नज़ारा देखता रहता है। वह इस दुनिया के फल की भी इच्छा नहीं करता।

ज्ञानचक्षु

(लेखक : ब्रह्माकुमार अनंत, अकोला-महाराष्ट्र)

ईश्वरीय ज्ञान में आने से पहले मुझे सिनेमा देखने का बहुत शौक था। जैसे वह मेरा सहज संस्कार बन चुका था। कहते भी हैं ना "जैसी दृष्टि वैसी वृत्ति और सृष्टि !" सुबह नींद से उठने के बाद मेरा पहला संकल्प यह रहता था, कि बस ऽ ऽ ऽ आज छुट्टी है, सिनेमा जाना है ? हाँ ! हाँ वह धर्मेन्द्र की फिल्म है ना। अच्छी है बहुत अच्छी है ! बहुत मारामारी खून, हत्या आदि उसमें दिखाई है, वही फिल्म देखनी चाहिए। फिर सुबह से लेकर शाम को सिनेमा देखने जाने तक हर प्रकार के सिनेमा के दृश्य मेरी आँखों के सामने सहज ही दिखाई देते थे।

जब सिनेमा देखने जाता था तो सिनेमा का दृश्य देखते-देखते दिल भर आता था। वह कैसे क्रोध करता है, वह क्रोध याद आता था। उसके आव-भाव वाले दृश्य मेरे आँखों के सामने घूमते थे।

लौटने के बाद जब मैं सोता था, तब नींद में भी मेरे चेहरे पर उसके भाव प्रकट होते थे। क्योंकि सिनेमा मेरे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार वश होने का सहज साधन बन चुका था।

वैसे ही मैं खुद को सिने ऐक्टर समझता था। किसी से बात करनी है, तो उस ऐक्शन के साथ बात करता था। चलना है तो उस ऐक्शन के साथ सीना तान के चलता था। क्रोध करना हो तो वह भी ऐक्शन के साथ लेकिन कभी-कभी मेरे इस ऐक्शन से रिऐक्शन भी हो जाती थी जो मेरी इस चाल-चलन, बोल व कर्म से मुझे डाँट या मार भी पड़ती थी।

परन्तु इस ज्ञान में आने के बाद परमपिता शिव बाबा ने आज सारी अविनाशी सृष्टि का ड्रामा सामने रखा है। मैं धीरे-धीरे बोलने लगा खुद को फरिश्ता समझने लगा।

स्थूल चक्षु के साथ-साथ ज्ञान चक्षु की आवश्यकता

इन स्थूल चक्षुओं से जैसा भी हम देखते हैं वैसा हमारा स्वरूप बन जाता है। जैसे—कोई चीज़ अच्छी दिखाई दे रही है, लगता है देखते ही रह जायें। कभी किसी शरीर की ओर देख कर हम आकर्षित हो जाते हैं तो आकर्षित कराने वाले ये स्थूल नेत्र हैं। जो भी हम इन स्थूल आँखों से देखते हैं मन उस पर सोचता रहता है।

इस लिए शिव बाबा ने हमें ज्ञान का तीसरा नेत्र दिया। "ज्ञान चक्षु" माना शुद्ध बुद्धि, रॉयल बुद्धि, जिससे जीवन को ऊँचा और श्रेष्ठ बनाने के लिए, सही दिशा में पुरुषार्थ कर सकते हैं। यह नेत्र हमें स्थूल नेत्रों से दिखने वाली चीज़ के आकर्षण से परे ले जाने वाला है। जैसे—शिव बाबा कहते हैं "बच्चे ! देखते हुए भी न देखो" इसका अर्थ यह है कि वह चीज़ हमें स्थूल नेत्रों से दिखाई दे रही है, परंतु ज्ञान नेत्रों से उसे ईश्वरीय अलौकिक अर्थ में मोल्ड करना है।

ज्ञान नेत्रों द्वारा देखने का ढंग

जब हम दूसरों के सद्गुण सुनते हैं। तो सुनते-सुनते हमारी आँखों में वह दृश्य घूमता है जैसे कि बुद्धि से हम वह दृश्य देखते हैं। देखते-देखते हमारी वृत्ति भी बदलती है। और वृति के साथ-साथ कृति तक भी पहूँच जाते हैं। हम गुण ग्राहक बन जाते हैं, जो मिलते ही हमारी दूसरों के बारे में दृष्टि, वृत्ति, कृति पलट जाती है।

वैसे ही शिव बाबा ने हमें ८४ जन्मों की कहानी सुनाई है जिसे न देखते हुए भी हम जान सकते हैं।

शेष पृष्ट २६ पर

संकल्प शक्ति

ब्र० कु० आत्म प्रकाश, मधुवन, आबू

आत्मा का हर कार्य संकल्प शक्ति के आधार पर ही होता है। संकल्पों की शक्ति जितनी अधिक है उतना ही कार्य शीघ्र सफल होता है। नहीं तो छोटा कार्य भी उधेड़-बुन उत्पन्न कर देता है। मन में असीम शक्ति है। उसका बहाव संकल्प के रूप में चारों ओर होता रहता है। अगर आत्मा कुछ क्षण भी इस बहाव को रोकती है तो मन की शक्ति बढ़ने लगती है।

अतः मन की शक्ति की वृद्धि के लिए सबसे पहले अशरीरी स्थिति, अर्थात 'Dead Silence' में स्थित होना चाहिए। स्वयं को संपूर्ण रूप से शरीर से भिन्न एक ज्योति अनुभव करें और फिर बुद्धि को सर्व-शक्तिमान शिव बाबा के साथ एक संकल्प में स्थित कर दें, अर्थात एकाग्र कर दें। इस प्रकार एकाग्रता का अभ्यास बढ़ाना चाहिए।

इसी के साथ-साथ हमारे संकल्पों में पवित्रता का बल चाहिए। एक योगी जो पवित्रता के बल से सम्पन्न है, अपनी मन-शक्ति द्वारा अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कर विश्व-परिवर्तन के कार्य में एक विशाल भूमिका निभा सकता है। मन में जितने कम संकल्प रहेंगे, संकल्प शक्ति उतनी ही तीव्र होगी। मन में संकल्पों की अधिकता संकल्प शक्ति की तीव्रता को कम कर देती है। इसलिए एक योग-अभिलाषी आत्मा को चाहिए कि वह अपने एक-एक संकल्प के महत्व को जाने। और उसे यों ही व्यर्थ न बहाये। बिना अर्थ ही चिड़चिड़ेपन में, या छोटी-छोटी बातों के टकराव में या परचिन्तन में या अनुमान, ईर्ष्या, द्वेष में अपनी अमूल्य निधि को नहीं गँवाना चाहिए। हमारे पास ही शक्ति का भण्डार है, हमें उसे सुरक्षित करना है और सर्वशक्तिमान परमात्मा जो शक्ति का स्रोत है उससे शक्तियाँ ग्रहण करनी हैं।

पुरुषार्थियों को एक बात स्पष्ट रूप से जान लेनी चाहिए—वह है Theory of Vibrations (प्रकम्पन सिद्धान्त) जैसी कोई आत्मा है, अर्थात जैसे संकल्प जिसके मन में हैं वैसे ही प्रकम्पन (Vibrations) उससे चारों ओर फैलते रहते हैं। यह कार्य हर समय स्वतः ही हो रहा है। इसी सिद्धान्त पर वातावरण बनता है। जैसे शब्द अविनाशी है और वह क्षण में ही समस्त वायुमण्डल में छा जाता है, उसी प्रकार संकल्प भी अविनाशी शक्ति है और वह शक्ति भी वायुमण्डल में तुरन्त ही फैल जाती है। जैसे शब्द को रेडियो या वायरलेस द्वारा पकड़ा जा सकता है, वैसे ही संकल्प को पकड़ा जा सकता है।

इस प्रकार पवित्र आत्माओं के पवित्र संकल्पों के प्रकम्पन (Vibrations) उसके चारों ओर फैलते हैं, इसलिए पवित्र देवताओं के सिर के पीछे श्वेत-पवित्रता का छत्र भी सुशोभित रहता है। वर्तमान समय भी हम योग-अभ्यासी पवित्र आत्माओं के पवित्र संकल्प समस्त दूषित वायुमण्डल को स्वच्छ करने में कार्य-रत हैं। यह कार्य यज्ञ या हवन से ही नहीं बल्कि पवित्रता के बल से होता है।

जब हमारे मन में किसी आत्मा के बारे में संकल्प उठते हैं तो हमारे वो संकल्प हमारी संकल्प शक्ति के अनुसार उस गति से उस आत्मा की ओर प्रवाहित होते हैं और वो तुरन्त सम्बन्धित आत्मा को पहुँचकर प्रभावित करते हैं। यह हम सबने अनेक बार अनुभव भी किया है। इसलिए अगर एक आत्मा के मन में दूसरे के प्रति शुभ-भावनाएँ हैं तो उस आत्मा को अवश्य ही उसके लिए स्नेह जागृत हो जाएगा। अगर एक के मन में ज़रा-सी भी घृणा है तो वह दूसरे के

मन की घृणा को अवश्य ही उत्तेजित करेगी। इसलिए, अगर किसी के मन में हमारे प्रति घृणा वृत्ति है तो हम अपनी शुभ भावना से उसकी वृत्ति को बदल सकते हैं।

संकल्प शक्ति से दूसरों की वृत्ति को सफ़लतापूर्वक बदला जा सकता है। अगर हमारी संकल्प शक्ति अधिक होगी तो जब कोई हमारे सामने आयेगा, उसके संकल्प बदल जाएँगे। देह-भान में आई हुई आत्मा आत्म-अनुभूति करने लगेगी। इन्हीं सिद्धान्तों के आधार से हम विश्व-सेवा में बहुत सहयोगी बन सकते हैं। हम वातावरण को अपने वश कर सकते हैं।

मान लीजिए, कोई आत्मा ज्ञान और योग में बड़ी तीव्र रफ़्तार से चल रही थी, परन्तु कालान्तर में उसके संकल्पों में भारी कमज़ोरी आ गई, तो हम दूर बैठे भी उस आत्मा की उमंग बढ़ा सकते हैं। कैसे? अपना सम्बन्ध सर्व शक्तिमान परमपिता से जोड़कर उस आत्मा को अप्रत्यक्ष रूप से प्रगट कर उसे कुछ उमंग के संकल्प दें। निश्चित रूप से वह उमंगों से भर जाऐगी। इसी प्रकार अगर कोई आत्मा ज्ञान-योग लेने की इच्छुक तो बहुत है परन्तु उसमें धारणा शक्ति नहीं है तो हम अमृत वेले योग-युक्त होकर उसे शक्तियों का दान कर सकते हैं। ऐसा करने से अवश्य ही उसे ऊँची धारणाएँ सहज अनुभव होंगी।

संकल्प शक्ति द्वारा विश्व-परिवर्तन

इसी प्रकार, एक स्थान पर रहते, दूर की किसी आत्मा के विचारों को भी बदला जा सकता है, संस्कारों को भी बदला जा सकता है। हम अपनी शक्तिशाली स्थिति में अधिक काल स्थित रहें तो हमारा मनोबल इतना बढ़ जाएगा जिसके आगे दूसरों को अपनी कमज़ोरियों का शीघ्र ही एहसास होने लगेगा। जैसे कई आत्माओं ने एक बात का अनुभव किया होगा कि जब हम शिव बाबा के सामने जाते हैं और हम कुछ प्रश्न मन में लेकर जाते हैं तो बाबा की दृष्टि पड़ते ही या तो हम अपने प्रश्नों को भूल जाते हैं या हमें अपने प्रश्न बहुत साधारण लगने लगते हैं और हम सोचने लगते हैं कि ये छोटी-सी बात बाबा से क्या पूछें? ऐसा क्यों होता है? उस समय बाबा के चारों ओर इतने शक्तिशाली प्रकम्पन (Vibrations) होते हैं कि उसके प्रभाव में हमारी कम मन-शक्ति सब कुछ भूल जाती है और हमें अपनी महानताओं का भाव होने लगता है। इसी प्रकार हमारे सामने अगर कोई हमसे कम मनोबल वाली आत्मा आयेगी तो ऐसा ही प्रभाव उस पर भी होगा।

यह बात सर्व विदित है कि अगर दूसरों को कोई शिक्षा देने वाले में स्वयं में उन बातों की श्रेष्ठ धारणा नहीं होगी तो दूसरों पर तदानुसार ही प्रभाव पड़ेगा। केवल ज्ञान भाषण से ही आत्मा को श्रेष्ठ नहीं किया जा सकता क्योंकि जिसमें जो धारणा है उसी प्रकार के (Vibrations) चारों ओर उनसे फैलते हैं। और अगर वह योग-युक्त होकर व आत्मिक दृष्टि से कोई बात दूसरों को कहता है तो उसके सभी (Vibrations) उस आत्मा को प्राप्त होने लगते हैं। अर्थात वह उसको ज्ञान के साथ-साथ धारणा करने की शक्ति भी दे देता है और फलस्वरूप उस आत्मा में वह बात सहज ही धारण हो जाती है इसलिए बाबा कहते हैं दूसरों को योग-युक्त होकर समझाओ।

इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर संग का प्रभाव दूसरों पर पड़ता है। अगर हम परमपिता परमात्मा शिव के साथ बुद्धि द्वारा रहते हैं तो उसके गुण व शक्तियाँ आत्मा में प्रवाहित होने लगती हैं।

बाबा की एक बात सभी को याद होगी कि जो आत्माए ८ घण्टा योग-युक्त रहते हैं वो मानो विश्व की बहुत बड़ी सेवा करते हैं क्योंकि ये है विश्व तक पवित्रता व शान्ति के (Vibrations) फैलाना। इसी तरह बाबा मनसा सेवा के महत्व को बताते हुए अमृतवेले रूहों से रूहरिहान करने का आदेश भी देते हैं। अर्थात हम योगयुक्त होकर अपनी बात अन्य आत्माओं तक पहुँचा सकते हैं। या हम अमृत वेले शांति का, शक्ति का या आनन्द का प्रवाह दुखी अशान्त

आत्माओं तक भेज सकते हैं। यह कार्य स्वतः ही होता है, जिस-जिस प्रकार की स्थिति में हम स्थित हैं उस-उस तरह के (Vibrations) हमसे चारों ओर प्रवाहित होते रहते हैं। जैसे आपने देखा होगा क्लास में या किसी कार्यक्रम में अगर सब आनन्द मना रहे हैं तो चारों ओर आनन्द का ऐसा वातावरण हो जाता कि उदास आत्माएँ भी हर्षित हो जाती हैं, ऐसे ही शान्ति वा शक्ति का। परन्तु अगर हमें ये (Vibrations) किसी विशेष आत्माओं तक पहुँचाने होते हैं तो अपने (Vibrations) का प्रवाह उन आत्माओं की ओर ही सम्पूर्ण रूप से करना होगा।

इसी प्रकार एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाते-बढ़ाते हम किन्हीं विशेष गुणों या योग्यताओं का आह्वान भी स्वयं में कर सकते हैं। अपनी एकाग्रता की शक्ति से अनेक आत्माओं का आह्वान भी सरलता से किया जा सकता है और दूसरी आत्माएँ अवश्य ही ऐसा ही महसूस करेगी कि जैसे उन्हें कोई खींच रहा है।

पिछले दिनों में अव्यक्त बाबा ने एक गुह्य रहस्य बताया था कि सूक्ष्म वतन का कार्य किस आधार पर चलता है। बाबा ने स्पष्ट किया था संकल्प शक्ति के आधार पर। बाबा संकल्प करते हैं और वही दृश्य सामने उपस्थित हो जाता है। यह किस प्रकार होता है।

जैसे आजकल टेलीविजन में भी दूर के दृश्य समीप देखे जाते हैं। दूर जो दृश्य हो रहे हैं, उनकी तरंगे यहाँ भी वही चित्र प्रस्तुत कर रही हैं। इसी प्रकार संकल्प में इतनी शक्ति है कि उसके समक्ष प्रकृति अधीन हो जाती है और हर संकल्प को चित्रित कर देती है। इसके लिए एकाग्रता की शक्ति की आवश्यकता है। इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर सतयुग में प्रकृति दासी बनकर सेवा में उपस्थित रहती है।

आपको याद होगा बाबा कहते हैं तुम भक्तों की करुणा भरी पुकार सुन सकते हो। भविष्य में आने वाले विघ्नों, तूफ़ानों को जान सकते हो। तो जैसे आज (Science) की शक्ति ये सब चमत्कारी कार्य कर रही है वैसे ही (Silence) की शक्ति भी अलौकिक चमत्कारी कार्य करती है। परन्तु इसके लिए हमें अपनी मन-शक्ति को व्यर्थ न गवाँकर मनोबल बढ़ाना होगा।

—:०:—

बिहार के उत्पाद एवं मद् निषेध विभाग के मन्त्री भ्राता करमचन्द्र भगत को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बाँध रही हैं। साथ में ब्र० कु० गिरजा शंकर बैठे हैं।

जब से मिले तुम मुझको बाबा

ब्रह्माकुमार सूरज प्रकाश, सहारनपुर

जब से मिले तुम मुझको बाबा, मेरे पथ की हर मुश्किल आसान हुई है।
मौसम रुष्ट हुआ लगता था पहले
मेरे हिस्से पतझड़ था बहार नहीं
काँटों ने ही चूमा था पाँवों को मेरे
मेरे हिस्से फूलों का था प्यार नहीं
जीवन की बगिया में तुम आये तो, हर खुशी मुझ पर मेहरबान हुई है।
जब से मिले तुम मुझको बाबा, मेरे पथ की हर मुश्किल आसान हुई है।
हर पग पर स्वागत करती थी मायूसी
बुरे सपने थे मेरी निगाहों में
मंज़िल दिखती थी न मुझको दूर-दूर तक
मैं भटका फिरता था अपनी राहों में
ज्ञान दिया आकर ऐसा मुझको अपनी मंज़िल की पहचान हुई है।
जब से मिले तुम मुझको बाबा, मेरे पथ की हर मुश्किल आसान हुई है।
जगत् क्या है जानने की मन में थी अभिलाषा
कितने ही यत्न किये पर लगती हाथ निराशा
समझ नहीं पाया था क्या है जीवन की परिभाषा
मानव, मानव को खाता है कैसा खेल तमाशा
अब तो सर्व संबंध तुम से है बाकी सारी दुनिया मेरे लिए शमशान हुई है
जब से मिले तुम मुझको बाबा मेरे पथ की हर मुश्किल आसान हुई है।
चिरसंचित अपनी तृषा बुझाने
कब से निर्जन में था भटक रहा
मृग जल को सुधा समझ पागल
मरुस्थल में अब तक सदा बहा
अब पाकर तुमको धन्य हुआ मैं, जीवन मेरी महान हुई है
जब से मिले तुम मुझको बाबा, मेरे पथ की हर मुश्किल आसान हुई है।
लोभ लुटेरे ने लूटा, सन्तोष-कोष ही भारी
धैर्य बाँध टूटा जाता, मन सन्ताप पूर्ण लाचारी
घाव कौन देखे मन के, छल की भीतर चले कटारी
पाप के पौधों से भरी थी जीवन की हर क्यारी
जिस घड़ी मिली पहचान तुम्हारी, वो घड़ी मेरे लिये वरदान हुई है।
जब से मिले तुम मुझको बाबा, मेरे पथ की हर मुश्किल आसान हुई है।

गीता-ज्ञान दाता

ब्रह्माकुमार सूरजकुमार, मधुबन (आबू)

एकांकी—

पात्र—

१. **गीतानन्द शास्त्री**—गीता के एक विद्वान।

२. **सरोज**—ब्रह्मकुमारी, ब्राह्माकुमारी आश्रम की ज्ञान-योग की शिक्षिका बाल ब्रह्मचारिणी व योगिनी।

३. **एक ब्रह्माकुमार**

४. **पंडित मनसुखदास**—गीता के प्रकाण्ड पण्डित।

५. **प्रवीण**—तत्व ज्ञान का विद्यार्थी व पंडित मनसुख-दास के मित्र का पुत्र।

"प्रथम दृश्य"

ब्रह्माकुमारी आश्रम, जिसमें ब्रह्माकुमारी सरोज कुर्सी पर बैठी कुछ अध्ययन कर रही है। वातावरण शान्ति बिखेर रहा है। सरोज के चेहरे पर चन्द्रमा सी कान्ति झलक रही है।

बाहर से घण्टी बजती है···सरोज दरवाज़ा खोलती है। शास्त्री जी प्रवेश करते हैं।

सरोज—आइए बैठिए, शायद प्रथम बार ही आए हैं।

शास्त्री—(कुछ जोर से) नहीं-नहीं अनेक बार आया हूं। सुना है आप भारत के प्राचीन ग्रन्थ गीता को खण्डित करती हैं। आप महापाप के भागी होंगे। पहले ही भारत के लोग धर्म विमुख हो रहे हैं और जो बचे खुचे हैं उनकी श्रद्धा को भी आप समाप्त कर रही हैं। आप ऐसा धर्म विरोधी कार्य क्यों कर रहे हैं। मेरी समझ में आपकी ये बातें नहीं आतीं।

सरोज—(जो अब तक मुस्कराते हुए उनकी बातें सुन रही थी) नहीं भाई, हम तो गीता-ज्ञान को जीवन में धारण करने की सरल विधि बता रहे हैं। हाँ गीता की वास्तविकता को अवश्य ही प्रत्यक्ष करना चाहते हैं। आप गुण ग्राहक बनकर समझने का प्रयास कीजिए।

शास्त्री—नहीं-नहीं, मैं आपके कई आश्रमों पर गया। आपकी सब बातें ठीक हैं। आपका जीवन भी मुझे अच्छा लगता है। आपका पवित्र जीवन मुझे भी पवित्रता की प्रेरणा देता है। परन्तु ये गीता को खण्डित करना—आप इसे बन्द करें।

सरोज—आप तो बड़े अच्छे विद्वान हैं। क्या आपने कभी गहराई से विचार किया कि इन हज़ारों ब्रह्मा-वत्सों का जीवन किसने पवित्र किया?

शास्त्री—किसने किया?

सरोज—देखो बन्धु, जब हम गीता-ज्ञान दाता श्री कृष्ण को मानते थे तो हम जीवन को पवित्र नहीं बना सके। और जब से हमें यह सत्य रहस्य मालूम हुआ कि निराकार ज्ञान सागर, ज्योति स्वरूप, श्री कृष्ण के भी परमपिता शिव ही गीता-ज्ञान दाता हैं तो हज़ारों ब्रह्माकुमार, कुमारियों का जीवन पवित्र हो गया।

आप एक तरफ उन विद्वानों को खड़ा कर दीजिए जो श्री कृष्ण को गीता-ज्ञान दाता मानते हैं और दूसरी तरफ उन ब्रह्मा-वत्सों को खड़ा कीजिए जो शिव को गीता-ज्ञान दाता मानते हैं और देखिए गीता किसके जीवन में उतरी है। जिसका जीवन गीता बना हो, वही तो गीता की सत्यता को जान सकते हैं।

शास्त्री—जीवन श्रेष्ठ तो गीता को न पढ़ने वालों का भी हो सकता है, इसमें जीवन का क्या सम्बन्ध···?

सरोज—नहीं, विद्वान महाशय, गीता में जैसा वर्णन है, जिस दैवी सम्पदा का वर्णन है, मनोविकारों

को जीतने का वर्णन है, उससे क्या यह स्पष्ट नहीं कि गीता मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाने वाली है। नहीं तो गीता का प्रयोजन ही क्या रहा ?

शास्त्री—हाँ, गीता से शान्ति तो मिलती है।

सरोज—साथ ही जीवन पवित्र भी बनता है।

शास्त्री—तो क्या गीता के विद्वानों का जीवन पवित्र नहीं है ?

सरोज—पवित्रता केवल बाह्य रूप से नहीं, केवल यज्ञ-हवन करने की नहीं, गीता में तो मन की पवित्रता का वर्णन है। जिसे गीता में 'काम' महावैरी कहा गया है।—अर्थात् ब्रह्मचर्य का पालन करना।

शास्त्री—ब्रह्मचर्य और कलियुग में ये तो बड़ी ही दुस्तर बात की आपने, भगवान ने अर्जुन को गीता-ज्ञान दिया, क्या अर्जुन ब्रह्मचर्य में रहा ? फिर हम ऐसा क्यों सोचें ? गीता को कण्ठस्थ कर उसका उपदेश करना और मनुष्यों को श्रेष्ठ कर्मों की प्रेरणा देना—यही तो गीता का व गीता के विद्वानों का सन्देश है।

सरोज—ये ही तो कुछ गुह्य बातें गीता-ज्ञान के बारे में लुप्त हो गईं जिससे कि पीछे आने वाले टीकाकारों ने श्री कृष्ण और अर्जुन दोनों को ही इस रूप में चित्रित कर दिया कि, नवपीढ़ी की श्रद्धा गीता आदि शास्त्रों से हट गई। वास्तव में तो गीता सुनने वाले सभी पवित्र आत्मा बने थे। वरना परमात्मा के अवतरण का प्रयोजन ही क्या ? परमात्मा है ही पतितपानव, तो वो मनुष्यात्माओं को पावन ही तो बनाएंगे। वरना उनका गुण 'पतित-पावन' सार्थक सिद्ध नहीं होगा।

शास्त्री—आपका मतलब गीता 'काम' विकार को जीतने की प्रेरणा देती है—ठीक है ? तीसरे अध्याय में भगवान ने इसका उल्लेख किया है। परन्तु, बहन जी, कलियुग का प्रभाव भी तो कुछ है ना ?

सरोज—इसका मतलब ? आप तो पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं न ?

शास्त्री—मैं तो गृहस्थी हूं। ब्रह्मचर्य के लिए तो गृह-त्याग ही एक मात्र साधन है।

सरोज—तो विद्वान महोदय, जो पवित्र नहीं उसे तो गीता का अनुभव भी नहीं हुआ होगा। तब भला गीता पर चर्चा करने की बात कहाँ रही ? बिना पवित्रता के तो परमात्मा से दिव्य बुद्धि का वरदान नहीं मिलता और दिव्य बुद्धि के बिना तो गीता के गुह्य रहस्यों को जाना ही नहीं जा सकता।

शास्त्री—(कुछ हीनता से) बहन जी, गीता ज्ञान को समझना अलग बात है और धारण करना अलग बात। चलो मान भी लें कि हमने गीता-ज्ञान को धारण नहीं किया है परन्तु हमने उसे समझा भी नहीं है—इस बात को चुनौती नहीं दी जा सकती।

सरोज—परन्तु जिसने जिस बात को धारण ही न किया हो, उसे उस बात पर गौरान्वित भाषण करने का अधिकार ही कहाँ है।

शास्त्री—बात तो आपकी भी ठीक है, परन्तु हमने गीता को नहीं समझा ये हम कैसे मानें ?

सरोज—इसके लिए एक साधन है।

शास्त्री—बताइये, कौन-सा ?

सरोज—आप किसी ऐसे गीता के विद्वान को लाइये जिसने 'काम' और 'क्रोध' को जीता हो। हम उससे गीता पर चर्चा करेंगे और तब कुछ सत्य पर विचार हो सकेगा क्योंकि मैं ज्ञान का अधिकारी उसी महापुरुष को मानती हूं जिसने इन मनोविकारों को जीता हो।

शास्त्री—आपने तो शर्त ही अनोखी रख दी। आप हम से ही वाद-विवाद कीजिए।

सरोज—बन्धु, तर्क प्रमाण से भी बड़ा प्रत्यक्ष प्रमाण व अनुभव प्रमाण होता है—यह तो आप मानेंगे ही।

शास्त्री—निःसन्देह।

सरोज—तो जिसने गीता के महावाक्यों का जीवन में कुछ अनुभव किया हो उसे ही उस पर वाद-

विवाद करने का अधिकार है। अतः आप किसी ऐसे ही विद्वान को लाइए।

शास्त्री—ठीक हैं, अगर ऐसी ही बात है तो हमारे यहाँ गीता के एक प्रकाण्ड विद्वान हैं, ब्रह्मचारी भी हैं, उन्हें हम लायेंगे। परन्तु उन्हें थोड़ा-थोड़ा क्रोध तो आ जाता है, उसका आप ख्याल न करें।

सरोज—चलो, कोई बात नहीं। उन्हें ही लाइए और कहना कि वाद-विवाद प्रेम से ही करें। और मुख से किसी भी अपशब्द का उच्चारण न करें क्योंकि अपशब्द विद्वान के मुख की शोभा नहीं हैं।

शास्त्री— ठीक है, मैं तीन-चार दिन में ही उन्हें लाऊंगा। अभी मुझे आज्ञा दें, मुझे तो आपका कार्य बहुत ही पसन्द है, परन्तु बस···

सरोज—ये भी ठीक हो जाएगा। अभी आप हमारा ये म्यूजियम देखिए।

शास्त्री—चलिए।

(पर्दा बन्द)

"दूसरा दृश्य"

महापंडित मनसुखदास का घर। घर में धार्मिक चित्र लगे हुए हैं। चारों ओर धार्मिक पुस्तकें नज़र आती हैं। इनकी पत्नी का देहान्त १० वर्ष पूर्व हो गया था, तब से ही ये ब्रह्मचर्य में हैं। उनके पास में एक तत्व ज्ञान का विद्यार्थी प्रवीण भी बैठा हुआ है। दोनों में वाद-विवाद हो रहा है।

प्रवीण— पंडित जी, मैं बचपन से ही गीता का अभ्यास कर रहा हूँ, जितनी बार उसे पढ़ता हूँ, नित्य नया ही लगता है। इसीलिए मैंने एम० ए० में दर्शन शास्त्र का विषय ही चुना है। परन्तु कुछ बातें मेरी समझ में नहीं आईं।

पंडित जी—बेटा, धीरे-धीरे सब समझ में आ जायेगा। देखो मुझे तो गीता का एक-एक श्लोक याद है, फिर भी नित्य नए रहस्य मालूम होते हैं। गीता तो अथाह ज्ञान का शास्त्र है। अथाह ज्ञान के श्रोत भगवान विष्णु के कमल मुख से निकली हुई यह गीता भी अनन्त ज्ञान वाली है। इसका भी पार नहीं पाया जा सकता।

प्रवीण—परन्तु पंडित जी, आज तक तो गीता पर हजारों टीकाएँ हो चुकी हैं। विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत इसके बारे में हैं। किस विचारधारा को सत्य माना जाए ? मुझे तो कई गुत्थियाँ अभी भी उलझी हुई ही दिखाई देती हैं।

पंडित जी—नहीं बेटा, तुम अभी बालक हो। हमारे महर्षियों ने सभी तथ्य सुलझाये हैं। आप अभ्यास करते रहो, सब स्पष्ट होता जाएगा।

प्रवीण—पंडित जी, मैं आपसे एक ही बात पर चर्चा करना चाहूँगा।

पंडित जी— अवश्य बेटा, निःसंकोच कर सकते हो। परन्तु याद रहे, इस क्षेत्र में श्रद्धा और विश्वास ही उत्थान के मूल तत्त्व हैं।

प्रवीण—पंडित जी, किसी बात में श्रद्धा व विश्वास भी तब ही होता है, जब उसकी सत्यता की छाप मन को सन्तुष्ट कर दे। अन्ध श्रद्धा से तो उत्थान नजर नहीं आता।

पंडित जी—तुम्हारी गलती नहीं बेटा, इस विज्ञान ने तो धर्म का बेड़ा गर्क ही कर दिया है। अच्छा खैर, बोलो तुम क्या कह रहे थे ?

प्रवीण—पंडित जी, अध्याय ३, श्लोक ३७ में भगवान ने 'काम' को बड़ा पापी, महाबैरी और सभी पापों का मूल कहा है।

पंडित जी—हाँ, बेटा, अध्याय १६, श्लोक २१ में भी भगवान ने यही आशा की है कि ये काम, क्रोध, लोभ आत्मा के महाशत्रु हैं, उसे अधोगति में ले जाने वाले हैं, अतः इन्हें त्याग देना चाहिए।

प्रवीण—ठीक बात है पंडित जी, परन्तु गीता में बड़ा ही विरोधाभास नजर आता है।

पंडित जी—कहाँ है विरोधाभास ? तुम्हारी समझ की कमी हो सकती है।

प्रवीण—अध्याय ७ के श्लोक ११ में ही भगवान ये कहते हैं, "मैं धर्म के अनुकूल अर्थात शास्त्र के अनुकूल काम हूँ" और एक अन्य जगह स्वयं को ही

कामदेव कहा है--यह कैसे ?

पंडित जी—तो इसमें क्या त्रुटि है ? काम से ही तो सृष्टि की उत्पत्ति होती है और भगवान सृष्टि के कर्त्ता हैं। इसलिए ही ऐसा कहा है।

प्रवीण—परन्तु शास्त्र तो ऐसा भी कहते हैं कि आदि में सृष्टि अमैथुनी थी—भगवान ने भी तो सृष्टि संकल्प से ही की थी।

अगर भगवान स्वयं ही 'काम' रूप हैं तो काम को जीतने की आज्ञा क्यों करते हैं ? फिर तो ब्रह्मचर्य जीवन का महत्व ही समाप्त हो जाता है। मुझे तो ऐसा लगता है कि ये श्लोक ऐसे ऋषियों ने जोड़ दिए हैं जो स्वयं 'काम' को न जीत सके।

पंडित जी—(हँसते हुए) बेटा, काम को भी प्रभु की प्रेरणा से उत्पन्न हुआ ही जानना चाहिए। देखो, अगर पराशर ऋषि को मल्लाह की लड़की को देख-कर काम उत्तेजना न होती तो वेद व्यास कहाँ से आते और तब हमें ये ग्रन्थ शास्त्र कहाँ से प्राप्त होते ? तो ये प्रभु की इच्छा ही जाननी चाहिए।

प्रवीण—पंडित जी, इस सिद्धान्त से तो कोई भी ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकता। फिर तो आज-कल के युग में नवयुवक व युवतियों के मन में काम की उत्तेजना को भी प्रभु की प्रेरणा ही माननी चाहिए ? तब इसे बुरा क्यों माना जाता है ? और भगवान ने तो इसे बड़ा पापी कहा है और आप परमात्मा की प्रेरणा कह रहे हैं। तब तो मेरी समझ में आप भी ब्रह्मचर्य में नहीं रहते होंगे ?

पंडित जी—(थोड़ा जोश में) मेरे ब्रह्मचर्य को चुनौती देने का अधिकार तुम्हें नहीं है। मैं १० वर्ष से ब्रह्मचर्य में रह रहा हूँ।

प्रवीण—तो क्या आपका मन सम्पूर्ण शुद्ध हो गया है ?

पंडित जी—उसके लिए तो प्रयास जारी है।

प्रवीण—तो जब कभी आपके मन में काम-वेग तेजी से चलता है, तो आप उसे प्रभु की ही प्रेरणा क्यों नहीं मानते ?

पंडित जी—(हँसते हुए) तुम बड़े चतुर हो, जाओ, पढ़ो-लिखो और विद्वान बनो और कुछ नई खोज करो !

इतने में ही गीतानन्द शास्त्री का प्रवेश

शास्त्री—ओम नमो···, पंडित जी !

पंडितजी—ओम नमो:···नमो:···नमो:! आइये, आइये, कहिये ? सकुशल तो हो ? आपको याद ही कर रहा था।

शास्त्री—एक बड़ा काम आपके पास लेकर आया हूँ।

पंडित जी—अरे बड़े काम क्या भई ? हम छोटे आदमी और बड़े काम ? अच्छा बोलो, क्या सेवा है ?

शास्त्री—पंडित जी, आप तो ब्रह्माकुमारियों को जानते ही हैं ?

पंडित जी—हाँ-हाँ, एक बार मुझ से उन्होंने अपने चित्रों का उद्घाटन भी कराया था। जीवन तो उनका बड़ा ही अच्छा है।

शास्त्री—परन्तु पंडित जी, आपको मालूम है, वे गीता को खंडित करती हैं। लोगों की शास्त्रों में श्रद्धा खत्म होती है। वे कहती हैं कि गीता-ज्ञान श्रीकृष्ण ने नहीं शिव ने दिया था।

पंडित जी—चलो कोई भी हो। हमें तो गीता से काम। गीता को तो वो भी श्रेष्ठ शास्त्र मानती हैं ना।

शास्त्री—मैं वहाँ गया था, मैंने उनसे वाद-विवाद करना चाहा। परन्तु उन्होंने कहा कि हम ऐसे विद्वान से वाद-विवाद कर सकती हैं जिसने काम व क्रोध को जीता हो। तो आप ही इस योग्य हैं। आप वहाँ चलिए और उस ब्रह्माकुमारी को शास्त्रार्थ में हरा कर इस दुष्कलंक को मिटाइये।

पंडित जी—मैं ब्रह्मचर्य में तो रहता हूँ परन्तु, भई, क्रोध तो कभी-कभी आ ही जाता है। है तो दोनों को ही जीतना कठिन काम।

शास्त्री—आप ब्रह्मचारी तो हैं ही, बस क्रोध

पर ध्यान रखना। वैसे वह ब्रह्माकुमारी भी काफी प्रभावशाली है। पता नहीं क्यों, उसके आगे सभी तर्क भूल जाते हैं।

पंडित जी—अरे छोड़ो गीतानन्द जी। जिनको जो चाहिए करने दो। भला कहीं बादल सूर्य के प्रकाश को समाप्त कर सकते हैं क्या ?

शास्त्री—परन्तु मैं आपको लाने का वायदा कर चुका हूँ। यह तो इज्जत का प्रश्न है, आपकी गरिमा का प्रश्न है।

प्रवीण—अवश्य चलो पंडित जी, मैं भी चलूँगा। और नहीं तो कुछ सीखेंगे ही। मनुष्य को सत्य को स्वीकार करने में पीछे नहीं रहना चाहिए। हो सकता है उन्होंने भी कुछ रहस्य जाने हों। इतनी बड़ी चुनौती उन्होंने यों ही तो नहीं दी होगी। अवश्य ही उनमें भी कुछ सत्यता का बल होगा।

पंडित जी—तो क्या तू भी चलना चाहता है ?

प्रवीण—हाँ-हाँ क्यों नहीं। आपका बल बढ़ाऊँगा ही।

पंडित जी—परन्तु बीच में कुछ भी नहीं बोलना।

प्रवीण—ठीक है, चुप रहूँगा।

पंडित जी—अच्छा गीतानन्द जी, विश्राम करो, कल सवेरे चलेंगे।

(पर्दा बन्द)

"तीसरा दृश्य'

ब्रह्माकुमारी आश्रम में पंडित मनसुखदास, गीतानन्द शास्त्री व विद्यार्थी का प्रवेश एक ब्रह्माकुमार उनका स्वागत करता है और सरोज बहन को उनके आने की सूचना देता है।

ब्रह्माकुमार—बहन जी, वे विद्वान पुनः आये हैं।

सरोज—ठीक है, उन्हें पानी पिलाकर योग कक्ष में बैठा दो, तब तक मैं आती हूँ।

ब्रह्माकुमार तीनों को योग कक्ष में बैठा देता है। पानी पिलाकर गीत बजाता है।

सर्व गुणों में पवित्रता, है उच्च और महान्
पवित्र बनो, श्रेष्ठ बनो, कहते शिव भगवान्।

पंडित जी—(धीमे से) कितना पवित्र वातावरण है यहाँ। हमने अपने गीता मन्दिर में ऐसा ही वातावरण बनाने का कितना प्रयास किया परन्तु हो ही नहीं पाया।

शास्त्री—कार्य तो इनका अनुकरणीय है। देखने में तो जैसे देवी लगती है।

ब्रह्माकुमारी सरोज का प्रवेश

तीनों उठकर अभिनन्दन करते हैं।

सरोज—हम इस शिव-बाबा के घर में आपका स्वागत करते हैं। कोई कष्ट तो नहीं हुआ ?

शास्त्री—नहीं, बहन जी !

ये महापंडित मनसुखदास जी गीता के प्रसिद्ध विद्वान। और पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए गीता के प्रचार में ही अपने जीवन की अनमोल घड़ियों को सफल कर रहे हैं।

और ये एम० ए० फिलोसफी का विद्यार्थी प्रवीण। इसे भी गीता में बहुत रुचि है।

सरोज—बहुत सुन्दर। आप जैसे प्रभु-प्रेमी व धर्म-प्रेमी आत्माओं के कारण ही संसार में धर्म टिका हुआ है। नहीं तो···

पंडित जी—बेटी, धर्म कहाँ ? धर्म का तो नाम ही रह गया है बस ! दिनोंदिन मनुष्य का पतन ही हो रहा है और इस साइंस ने तो बेड़ा गर्क ही कर दिया है।

सरोज—पंडित जी, क्या आपने कभी विचार किया कि गीता जैसा श्रेष्ठ धर्म शास्त्र होते हुए भी, करोड़ों लोगों के प्रतिदिन गीता-पाठ के बाद भी धर्म का पतन क्यों ?

पंडित जी—बेटी, लोग धर्म को अपनाते ही कहाँ हैं। उसके अनुसार आचरण हो, तब तो कुछ धर्म को बल मिले भी। केवल पढ़ने से क्या···

सरोज—गीता में मुख्यतः अनासक्त कर्मयोग की व काम क्रोध आदि मनोविकारों को मारने की

आज्ञा दी है। परन्तु आधुनिक काल में 'काम' का वेग आन्धी की तरह बढ़ता जा रहा है। इतना ही नहीं गीता के विद्वान भी अपने मन से इस वेग को रोकने में असमर्थ हैं। यह तो आप जानते ही हैं।

पंडित जी—हाँ बेटी, काम, क्रोध, लोभ को आत्मा की अधोगति के मूल कारण भगवान ने कहा है।

सरोज—फिर भी मनुष्य इन विकारों को जीतने में समर्थ क्यों नहीं है।

पंडित जी—कलियुग का प्रभाव, दूषित वातावरण, दूषित संग, दूषित साहित्य—इन सब में पवित्रता कहाँ सम्भव है।

सरोज—परन्तु महाराज, इन्हीं परिस्थितियों में हम जैसे हजारों ब्रह्मावत्स ब्रह्मचर्य का पालन कर रहे हैं। फिर गीता के विद्वान क्यों नहीं कर पाते? हमारी भेंट अनेक विद्वानों से होती है जिनमें से अधिकतर ब्रह्मचर्य को अति कठिन तपस्या मानते हैं। कहते हैं कि ये तो प्रभु की विशेष कृपा से ही सम्भव है।

पंडित जी—मैं तो १० वर्ष से ब्रह्मचर्य में हूँ। ये गीतानन्द जी गृहस्थी हैं, ये ही बतायेंगे कि कठिन क्यों भासता है?

शास्त्री जी—मैंने कई बार प्रयास किया, परन्तु मन की चचंलता को नहीं रोक सका। हार कर यह संकल्प ही छोड़ दिया। (हँसने लगते हैं)

सरोज—इसका कारण हम अच्छी तरह से जानते हैं।

जब तक आत्मा व परमात्मा का ज्ञान स्पष्ट नहीं होगा और आत्मा को निरन्तर परमात्मा से योग-युक्त करने का अभ्यास नहीं होगा, तब तक मनोविकारों को जीतना सम्भव नहीं।

विद्यार्थी—जैसा कि अध्याय ६ के श्लोक १४ में वर्णित है।

सरोज—इसी प्रकार दृष्टि को भृकुटि के मध्य स्थित करने का वर्णन है। इसका अर्थ है कि हम आत्मिक स्वरूप में स्थित होवें क्योंकि आत्मा दोनों भृकुटि के मध्य में विराजमान है।

विद्यार्थी—हाँ, अध्याय पाँच के श्लोक २७ में ऐसा लिखा है।

पंडित जी—हाँ, इसी प्रकार चौथे अध्याय में भी योग अग्नि आदि का वर्णन है और कई जगह कहा है कि "योगस्थ कुरु कर्माणि" अर्थात् योग-युक्त होकर कर्म कर।

सरोज—ये सब श्रेष्ठ बातें तो गीता में हैं, परन्तु योग-युक्त होकर कर्म कैसे करें? इसका स्पष्टीकरण विद्वानों को न हो सका। जानते हो इसका कारण?

पंडित जी—कहिये।

सरोज—परमात्मा के बारे में अस्पष्टता। गीता पर श्री कृष्ण का नाम।

पंडित जी—इसमें क्या हर्ज है? कोई भी गीता ज्ञान दाता हो, हमें तो योग से काम है।

सरोज—परन्तु पंडित जी, योग तो गीता-ज्ञान दाता से ही लगाना है। परन्तु जब मनुष्य श्री कृष्ण से योग लगाता है तो श्री कृष्ण तो एक देह धारी देवता हैं। और कोई भी देह धारी सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता। फलस्वरूप श्री कृष्ण से योग लगाने से शक्तियाँ नहीं मिलतीं और मनुष्य मनोविकारों पर जीत नहीं पा सकता।

जब से हमें यह ज्ञान मिला कि शिव निराकार ही ज्ञान-दाता व सर्वशक्तिमान है तो हमारा योग उनसे लगा और हज़ारों मनुष्यात्माएँ विकारों को जीतने में सफल हुई।

पंडित जी—परन्तु श्री कृष्ण को गीता सुनाने वाला मानने में हर्जा ही क्या है? वो भी तो भगवान के ही अवतार थे।

सरोज—देखो, पडित जी, परमात्मा को सूक्ष्मातिसूक्ष्म, प्रकाश स्वरूप, अव्यक्त कहा है। श्री कृष्ण के साथ ये बातें सार्थक सिद्ध नहीं होतीं।

विद्यार्थी—हाँ, अध्याय ८ में ऐसा कहा है।

पंडित जी—बेटी, श्री कृष्ण के तन में तो वो

परम पुरुष ही विद्यमान थे जिनका इशारा श्री कृष्ण की ओर नहीं था, स्वयं की ओर ही था।

सरोज—तो कितने विद्वान हैं आज जो प्रकाश स्वरूप, अकाय परमात्मा से योग लगाते हैं ? वो तो सब श्री कृष्ण का ही ध्यान करते हैं। न तो उन्हें अशरीरीपन की ही अनुभूति होती और न परमात्मा की शक्तियों का ही आभास। बोलो क्या आप स्वयं भी उस निराकार से योग लगाते हैं।

पंडित जी—योगी तो हम बने ही नहीं।

सरोज—पवित्र बनने के लिए ऐसा योगी बनना आवश्यक है। तब ही तो कहा है कि योगी, तपस्वियों व शास्त्रवादियों से भी श्रेष्ठ है। परन्तु गीता पर श्री कृष्ण का नाम डालने से गीता मनुष्य को ऐसा योगी न बना सकी और फलस्वरूप मानव गीता-प्रेमी तो बने परन्तु वे स्वयं के पतन को न रोक सके और भारत कंगाल, मर्यादाहीन, संस्कृति हीन बनता गया।

पंडित जी—तो क्या गीता झूठी हो गई।

सरोज—गीता का मूल स्वरूप तो लुप्त ही है। और जहाँ-तहाँ विरोधाभास भी नज़र आता है—ये सब परिणाम हैं विद्वानों की मिलावट का।

पंडित जी—हमें तो ऐसा नज़र नहीं आता।

सरोज—पंडित जी, कहीं भगवान काम वैरी को जीतने की आज्ञा कर रहे हैं कहीं स्वयं को ही 'काम' रूप बता रहे हैं। कहीं स्वयं का धाम परमधाम बता रहे हैं, कहीं स्वयं को सर्वत्र कह रहे हैं। आप ही निर्णय करके बताइये कि सत्य क्या है ?

पंडित जी—(चुप रहते हैं)

सरोज—बोलिए महाराज, गीता में परमधाम का जिक्र कई जगह आया है यहाँ तक भगवान कहते हैं कि मेरे इस परमधाम को न सूर्य, न चन्द्रमा न अग्नि प्रकाशित कर सकती है। कहाँ है वह परमधाम ? किसी से भी इसका उत्तर बन सके तो दें।

सन्नाटा.....

प्रवीण—ठीक बात हैं पंडित जी। मैं भी उस दिन यही कह रहा था कि गीता में विरोधाभास है। मैं भी इन बहन की बात से सहमत हूँ।

सरोज—इसी प्रकार, कर्म में अनासक्त रहने के लिए योग की आवश्यकता है। गीता में स्थिर बुद्धि का तो विस्तृत विश्लेषण है, परन्तु बुद्धि को कहाँ स्थिर करें—क्या इसका ज्ञान किसी विद्वान को है। भगवान ने कहा है कि "मन को मेरे में स्थिर कर कर्म कर"। परन्तु कैसे ? क्या आप बतायेंगे ?

पंडित जी—कभी अभ्यास तो नहीं किया। आपने किया होगा—आप ही अपना अनुभव सुनावें।

सरोज—अनुभव सुनाने से भी अच्छा होगा कि आप तीनों ही हमारा २ दिन का योग शिविर करें। उसमें आपको गीता की सभी आज्ञाओं को पालन करने का सरल तरीका बता दिया जाए। इतना ही नहीं, आप स्वयं अनुभव कर सकेंगे।

प्रवीण—अवश्य, पंडित जी, आप भी विद्यार्थी बन जाओ।

पंडित जी—(विद्यार्थी को देखकर मुस्कराते हैं)

शास्त्री जी—ठीक है···

(पर्दा बन्द)

"चौथा दृश्य"

तीनों का ३ दिन का योग शिविर समाप्त हुआ। तीनों मंच पर बैठे हैं, चेहरों पर शान्ति है, दिव्यता है, मन में सन्तुष्टी है।

सरोज—आप तीनों का ३ दिन का अविस्मणीय अवसर समाप्त हुआ। अब सभी आपका अलौकिक अनुभव सुनने के इच्छुक हैं।

पंडित मनसुखदास—मैंने आजीवन गीता पढ़ी। ब्रह्मचर्य भी पालन किया। परन्तु मन के द्वन्द बन्द नहीं हुए। कई बार गीता-अध्ययन से मन में कई प्रश्न उठते थे, परन्तु यहाँ सभी का हल मिल गया। अब मेरा मन भी शुद्ध हो चुका है। मैंने उपदेश बहुत किए। भगवान को सर्वत्र कहते भी मैं स्वयं को उससे दूर महसूस करता था। अब लगता है कि वो तो

हमारे समीप है, हमारा बाप है। यह तो हमें किसी ने बताया ही नहीं कि हम उसके बच्चे हैं। अब मेरा बुद्धि योग उनसे लगा और मैंने इन सत्य को पहचाना कि बिना सर्वशक्तिवान परमात्मा के योग के आत्मा पावन नहीं बन सकती।

श्रीकृष्ण का क्या स्थान है—यह भी मालूम हुआ। वास्तव में गीता में तो 'भगवानुवाच' शब्द हैं। परन्तु श्री कृष्ण को भगवान मानने वालों ने ही उन्हें यह स्थान दे दिया।

गीतानन्दशास्त्री—प्रथम दिन योग-अभ्यास से ही एक दिव्य अनुभूति हुई कि अब मैं आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर सकूँगा, जिसे मैं पहाड़ उठाने जैसा कार्य समझता था। वास्तव में सत्य पथ वही है जो मनुष्य को पावन बना दे। मैंने यह जान लिया कि भगवान ने मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाने के लिए ही ज्ञान दिया था, परन्तु विद्वानों ने उसे इतना तोड़ा-मोड़ा कि सत्यता छुप ही गई। हम रोज परमधाम का नाम पढ़ते थे, परन्तु उसका सत्य बोध यहाँ ही हुआ।

प्रवीण—सबसे अधिक खुश मैं हूँ। मुझे मेरे मन की बात मिल गई। मैंने जान लिया कि सत्य ज्ञान केवल ज्ञान सागर परमात्मा ही दे सकता है। मनुष्य तो इन गुह्य बातों में उलझेगा ही। ज्ञान कितना सरल है, परन्तु विद्वानों ने उसे कितना जटिल बना दिया। मुझे तो सत्य मिल गया। बहुत शान्ति प्राप्त की।

सरोज—अब आप प्रतिदिन योग अभ्यास करें और गीता का अनुकरण करें। गीता में क्या प्रक्षिप्त है—यह खुद ही आपकी समझ में आ जायेगा।

शास्त्री—बहन जी, हम आपके बहुत आभारी हैं। हम यों ही अपने तुच्छ ज्ञान के अहंकार में आपकी ग्लानि करते रहे। आह हमें क्षमा करें। अब हम प्रतिदिन योग अभ्यास करेंगे।

पंडित जी—हम गीता की सत्यता सभी को बतायेंगे और अपना व दूसरों का जीवन पवित्र बनायेंगे।

सरोज—आज से आपके जीवन का स्वर्ण काल प्रारम्भ हुआ। अब आप स्वर्ण तुल्य बनें और सभी को बनायें। इस पुरुषोत्तम संगम युग पर स्वयं अकाय परमात्मा ब्रह्मा तन में दिव्य प्रवेश कर पुनः वही लोप हुआ सत्य ज्ञान दे रहे हैं और राजयोग सिखा रहे हैं—यह सत्यता आप सभी को बताएँ ताकि भारत में आये हुए निराकार परमात्मा शिव से मिलकर आत्माएँ अपनी जन्म-जन्म की प्यास बुझा

अच्छा, ओम शान्ति।

(पर्दा बन्द)

—:o:—

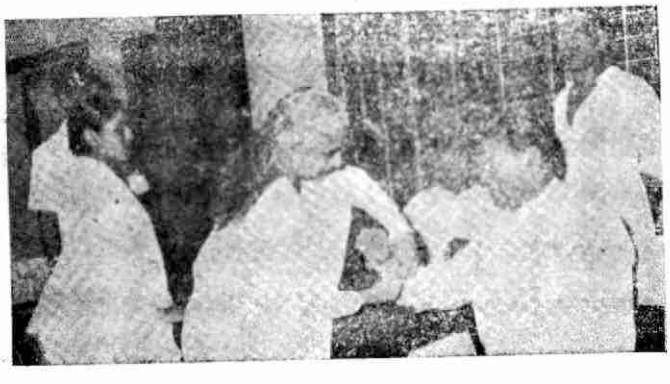

बिहार के लोक निर्माण विभाग के मंत्री भ्राता बुद्ध देव सिंह को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बाँध रही है। साथ में ब्र० कु० इन्द्रा व मथुरा प्रसाद भाई खड़े हैं।

नवरात्रि तथा विजय दशमी अथवा दशहरा का समाचार जिन समाचार पत्रों में छपा उनकी सूची

जबलपुर—युगधर्म (दैनिक) समाचार पत्र में नवरात्रि का अर्थ-बोध नामक लेख प्रकाशित हुआ।

लखनऊ—(दैनिक) स्वतन्त्र भारत तथा तरुण भारत "दशहरा का वास्तविक रहस्य" तथा क्या रावण मर चुका है ?" नामक लेख प्रकाशित हुए।

सोलापुर—(दैनिक) राष्ट्र तेज तथा (दैनिक) विश्व समाचार में "नवरात्रि" तथा "विजय दशमी अथवा दशहरा, रावण मर चुका है या अभी जिन्दा है ?" नामक लेख प्रकाशित हुए।

मैनपुरी—डिस्ट्रिक्ट गजट (साप्ताहिक) में "विजय दशमी अथवा दशहरा" तथा बलिदान (साप्ताहिक) में "नवरात्रि" से सम्बन्धित लेख प्रकाशित हुए।

सतना—जवान भारत (दैनिक) में "मन के रावण को मारो" नामक दशहरा का लेख प्रकाशित हुआ।

जूनागढ़—सौराष्ट्र भूमि, केसरी में "नवरात्रि का आध्यात्मिक रहस्य तथा अर्थ-बोध" तथा जय-हिन्द, सौराष्ट्र भूमि तथा केन्सरी में विजय दशमी या दशहरा", "क्या रावण मर चुका है या अभी जिन्दा है" लेख प्रकाशित हुए।

रेंरची—रेंरची से दि सेन्टिनल(दैनिक) समाचार पत्र में "राम और रावण की कहानी का वास्तविक अर्थ" नामक लेख प्रकाशित हुआ।

जालन्धर—(दैनिक) अजीत तथा(दैनिक) प्रताप में "दशहरा कैसे मनायें ?" नामक लेख प्रकाशित हुआ।

भरूच—भरूच से उपवन (साप्ताहिक) में "नव-रात्रि त्योहार का अर्थ-बोध" तथा "क्या रावण मर चुका है या अभी जिन्दा है" नामक लेख प्रकाशित हुए।

बुलन्दशहर—बरने एक्सप्रेस (साप्ताहिक) में "नवरात्रि एवम् दशहरा" का लेख प्रकाशित हुआ।

भिवानी—मस्त बादल (साप्ताहिक) में "विजय दशमी अथवा दशहरा" का लेख प्रकाशित हुआ।

१०-सूत्री कार्यक्रम के बारे में

लखनऊ से—(दैनिक) तरुण भारत में "समस्या और समाधान" नामक लेख प्रकाशित हुआ।

मुजफ्फरनगर से—(साप्ताहिक) विमल वाणी में "सबसे श्रेष्ठ चर्चा" अर्थात् १०-सूत्री में से एक सूत्र से सम्बन्धित लेख प्रकाशित हुआ।

जूनागढ़ से—दि टाइम्स आफ इण्डिया (दैनिक) नूतन सौराष्ट्र (दैनिक), (साप्ताहिक) शुरूआत तथा (दैनिक) लोकदूत में कैदियों की सेवा का समाचार तथा दि टाइम्स आफ इण्डिया (दैनिक) तथा संदेश (दैनिक) में दिल्ली अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का समाचार प्रकाशित हुआ।

बटाला से—(साप्ताहिक) आवाहन में महायज्ञ में सर्व को निमन्त्रण लिए लेख (देखना ईश्वरीय निमन्त्रण से कोई आत्मा वंचित न रह जाये) लेख प्रकाशित हुआ।

परली बैजनाथ से—(दैनिक) क्रांति संघर्ष में १०-सूत्री कार्यक्रम का समाचार प्रकाशित हुआ।

फलटण से—(साप्ताहिक)राजदण्ड में १०-सूत्री कार्यक्रम का समाचार प्रकाशित हुआ।

भंडारा से—(साप्ताहिक) चेव में "एक नई क्रांति जो लायेगी बिश्व शान्ति" का समाचार प्रकाशित हुआ।

नागपुर से—(दैनिक) नव प्रभात में "राखी आज के सन्दर्भ में" तथा "करो मोह का त्याग तो बने ऊँचा सौभाग्य" तथा "इस यज्ञ में तिल नहीं विकारों की आहुति दो" नामक लेख प्रकाशित हुए।

जगदीश चन्द्र हसीजा, सम्पादक एवं प्रकाशक, 151 ई, कमला नगर, दिल्ली ने गगन प्रिण्टर्स, कृष्ण नगर, दिल्ली-51 से छपवाया, Regd. No. 10563/65-D (D) 178

जालन्धर के ज़िलाधीश भ्राता सी० एल० वैंस को ब्र० कु० राज राखी बाँध रही हैं।

गुलबर्गा के डिवीजनल कमिश्नर भ्राता चितरंजन दास को राखी बाँधने के पश्चात् ब्र० कु० विजया उन्हें आत्म-स्मृति का तिलक लगा रही हैं।

बम्बई (मुलुन्द) में आयोजित समारोह में ब्र० कु० लाजवन्ती प्रवचन कर रही हैं तथा मंच पर सुप्रसिद्ध कवि एवं रेडियो कलाकार भ्राता सावला राम एव वहाँ के एम० एल० ए० आदि बैठे हैं।

मोरिशस के शिक्षा मंत्री भ्राता जगतसिंह को ब्र० कु० चन्द्रा राखी बाँध रही हैं। उनके साथ ब्र० कु० सोमप्रभा खड़ी हैं।

पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भ्राता के० बी० एन० सिंह को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बाँध रही हैं। साथ में उनकी धर्म पत्नी व अन्य बहन-भाई खड़े हैं।

कानपुर के एम० पी० को राखी बाँधने के पश्चात् ब्र० कु० दुलारी उन्हें आत्म-स्मृति का तिलक लगा रही हैं। साथ में वहाँ के बहन-भाई खड़े हैं।

Regd. No. D (D) 178

बिहार के लघु सिचाई एवं धार्मिक न्यास मंत्री भ्राता जगनारायण त्रिवेदी को राखी बाँधने के पश्चात् ब्र० कु० निर्मल पुष्पा आत्मस्मृति का तिलक लगा रही हैं।

जालन्धर के लैफ्टीनैन्ट जनरल भ्राता भूपेन्द्र सिंह को ब्र० कु० कृष्णा राखी बाँध रही हैं।

जालन्धर दूरदर्शन के निर्देशक भ्राता ए० एस० तातारी को ब्र० कु० राज राखी बाँध रही हैं। साथ में वहाँ के बहन भाई खड़े हैं।

बिहार के सहकारिता विभाग के राज्य मंत्री भ्राता सगीर अहमद को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बाँध रही हैं। उनके साथ ब्र० कु० इन्द्रा खड़ी हैं।

गोहाटी (आसाम) के चीफ जस्टिस व उनकी युगल को ब्र० कु० शीला राखी बाँध रही हैं। साथ में ब्र० कु० सदानन्द व शिव प्रसाद बैठे हैं।

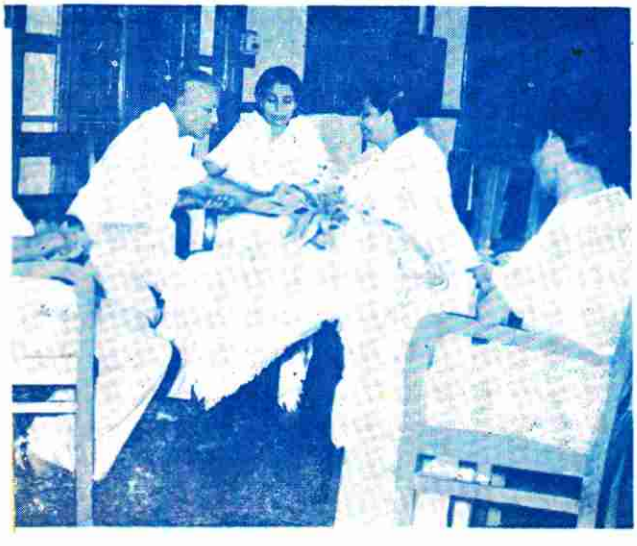

बिहार के कृषि मंत्री भ्राता ललितेश्वर प्रसाद को ब्र० कु० निर्मल पुष्पा राखी बाँध रही हैं। भ्राता रमेन्द्र एवं ब्र० कु० इन्द्रा साथ में खड़े हैं।